भूमिका

जैसाकि इस पुस्तिका के नाम से प्रकट है, इसे लिखने का उद्देश, घर ही साबुन बनाने के साधनों और तरीकों का बयान करना है। जहांतक हो सका वहांतक देशी चीजों के ही प्रयोग का ध्यान रखा गया है। साबुन बनाने के रीके भी आसान बनाकर लिखे गये हैं और वैज्ञानिक बारीकियों से बचने का त्न किया गया है। परन्तु ऐसा करते हुए इस हुनर के उसूलों को नजर अन्दाज हीं किया गया, क्योंकि चाहे देशी चीजें बरते चाहे विदेशी, उसूल तो वही के ही रहते हैं।

साबुन बनाने में तेलों और कॉस्टिक सोडा या पोटॅश की जरूरत पड़ती । पहला कच्चा माल अर्थात् तेल तो सब कहीं बहुतायत से मिलता है, परन्तु सरा कच्चा माल कहाँ से प्राप्त होता है यह बहुत कम लोग जानते हैं। औसत बुनसाज़ यही जानते हैं कि कॉस्टिक सोडा विदेश से आता है और सस्ते मों खरीदा जा सकता है। 'जियोग्राफिकल एण्ड जियोलॉजिकल सर्वे आव ण्डिया (भारत सरकार का भूगोल तथा भूगर्भ-सम्बन्धी पैमायश का विभाग) के ों को देखने से और भारत में क्या-क्या कच्चा माल मिल सकता है इस षय के अन्य साहित्य को पढने से ज्ञात होता है कि रेह, सज्जी मिट्टी, कुछ नस्पतियों की राखों और सिन्ध की ढांड तथा लोनार आदि खारी झीलों से लने वाले पापडखार के रूप में भारत में देशी खार प्रचुर मात्रा में मौजूद हैं। न सब चीजों में कम या अधिक परिमाण में सोडियम कार्बोनेट या धोबी-डा नामक लवण (नमक) होते हैं। साबुन बनाने के लिए जिस कॉस्टिक डा की जरूरत होती है वह इन सब चीजों से निकाला जा सकता है। इनके ए चूने की जरूरत पडेगी, जोकि स्वयम् एक देशी ही चीज़ है। साबुन में । नमक पडता है वह भी भारत में ही तैयार होता है।

यह काम सीखकर कोई भी आदमी अपने घर में ही थोडी मात्रा में म देने लायक साबुन बना सकता है। और उसके लिए औजार भी, डाही, टीन के खाली पीपे, लोहे की कड़छी, अँगीठी आदि ऐसे ही जरूरी

चित्र-सूची

होंगे जो हर घर में मिल सकते हैं। यदि साबुन बड़ी मात्रा में बनाना हो तो यही काम मशीनों से किया जा सकता है। अब गाँवों तक में साबुन घर-घर ज़रूरत की चीज़ बन चुका है। और इस तरह यह कारीगरी गृहोद्योग के रूप में जारी करने तथा शत-प्रतिशत स्वदेशी वस्तु बनाने के लिए सब अवस्थाएँ अनुकूल होने के कारण, अ. भा. ग्राम उद्योग संघ ने हाल ही में इसकी खोज शुरू की है। वर्धा के उद्योग-भवन में इस उद्योग (कारीगरी) से सम्बध्द अनेक समस्याओं को हल किया जा रहा है। 'कॉस्टिसिज़ेशन' (कॉस्टिक बनाने की) की विधि ज़रा झंझट की है। इसलिए इरादा यह है कि इसे थोड़ा-थोड़ा छोड़ दिया जाय और ऐसे उपायों से काम लिया जाय जिनमें तेलों को, एरण्ड के बीज के सत द्वारा, चिकनाई के तेज़ाबों और ग्लिसरीन में फाड़ा जा सके। जिन तेलों में चिकनाई वाले तेजाब बड़ी मात्रा में मौजूद हों वे, शुध्द किये हुए रेह, सज्जी मिट्टी आदि स्वाभाविक खारों के साथ मिलकर आसानी से साबुन बना देते हैं। परन्तु वे साबुन अधूरे होते हैं। उन्हें पूरा करने के लिए उनमें थोड़ा कॉस्टिक सोडा मिलाना पड़ता है। इसकी भी खोज हो रही है।

इस पुस्तिका में साबुन बनाने के तमाम नुस्खे लिखने या मिलावटी माल तैयार करने के तरीके बतलाने का यत्न नहीं किया गया। हमारी राय में मिलावटी माल न केवल अनजान ग्राहक को ठगने के लिए बनाये जाते हैं, बल्कि इस उद्योग को भी बदनाम करते हैं।

यदि किसी सज्जन को इस पुस्तिका में कोई भूल या गलत बात दिखाई दे तो वह उसकी तरफ़ लेखक का ध्यान खींचने की कृपा करें।

इस पुस्तिका के चित्र जे. जे. स्कूल ऑफ़ आर्ट, बम्बई के शिल्पविद्यार्थी श्री. बी. एस. साठे ने बनाये हैं।

—के. बी. जोशी

का रंग मटमैला-सा होता है। यदि उस में एरण्डी का तेल मिला दिया जाय तो साबुन पारदर्शक होजाता और पानी में तुरंत घुल जाता है। परन्तु इससे सफ़ाई नहीं होती। साधारण तरीक़ों से जो पारदर्शक साबुन बनाया जाता है उसमें मिलाने के लिए यह एक बहुत आवश्यक चीज़ है। एरण्डी के तेल के साबुन रंगाईमें और कपड़े के कारखानों में काम आते हैं। इस तेल में ठण्डी हालत में ही गन्धक का तेज़ाब (सल्फ्यूरिक ऐसिड) डालकर, उसे नमक के पानी से धोकर और बचे हुए तेल को सोडा से तेज़ाब रहित करके, 'टर्की रेड आयल' (टर्की पक्षी के रंग का लाल तेल) बनाया जाता है, जो कपड़ों के कारखानों में काम आता है।

टर्की रेड ऑईल बनाने का तरीका—जितना टर्की रेड ऑईल बनाना हो उसके ढ़ाई गुने मिक़दार के चीनी मिट्टी के बर्तन या लकड़ी के हौज इसके लिये चाहिये। लकडी के हौज में सीसे के चद्दर अच्छी तरह जुड़ाई कर बैठाने चाहिये और वह ताँबेकी कीलों से हौज में जड़ देने चाहिये। टर्की रेड ऑईल बनाने के लिये अंडी का तेल बिलकुल साफ़ होना चाहिये। घानी के तेल में नमक का घोल मिलाकर उसे उबालना चाहिये ताकि कचरा तेल से अलग हो जावेगा। विशुद्ध तेल ही काम में लाना चाहिये। वज़न से ५ भाग तेल लीजिये और १.८६ विशिष्ट गुरुत्व वाला १ भाग नमक का तेज़ाब लीजिये। तेल में थोड़ा थोड़ा नमक का तेजाब मिलाते जाना चाहिये ताकि तेल की उष्णता एकदम न बढ़ जाय। मिश्रण में अंगुली डालकर मामूली गरम मालूम हो इसकी फ़िक्र करनी चाहिये। जब तेजाब मिलाया जाता है तब वह मिश्रण अच्छी तरह से लकड़ी द्वारा हिलाना चाहिये। तेजाब का कुछ हिस्सा मिलाने के बाद मिश्रण गाढ़ा बन जायगा। सारा तेजाब मिला देने के बाद वह मिश्रण ३६ घंटोंतक रख देना चाहिये। उसके बाद उसमें बराबरी का पानी मिलाकर वह एक रात तक बिना हिलाये रहने देना चाहिये। दूसरे दिन नीचे का पानी टोंटी से या सायफन की पद्धति से निकाल देना चाहिये। इस प्रकार एक बार पानी से धुला हुआ मिश्रण मामूली नमक या ग्लाउबर नमक के ७% के मिश्रण से तीन या चार बार धोना चाहिये।

विषय—सूचि

इसके बाद तेज़ कॉस्टिक सोडा के घोल द्वारा तेल में का तेजाब का अंश नष्ट कर दिया जाता है और इस प्रकार सम बने मिश्रण में अर्थात् टर्कीरेड ऑईल में आवश्यकतानुसार ४०, ५० या ६० % पानी मिलाकर वह काम में लाया जाता है।

बरोजा और चिकने तेजाबों की श्रेणी—इस श्रेणी के तेलों का जो अंश साबुन बनाने में काम आता है वह तेजाबी होता है, और इस कारण कॉस्टिक सोडा या पोटॅश या सोडिअम कारबोनेट या पोटॅशिअम कारबोनेट के साथ तुरंत मिल जाता है, और अन्य तेलों की भाँति उससे ग्लिसरीन नहीं निकलता। जब इसका मेल कारबोनेटों से होता है तब खूब बुलबुले उठते हैं। इस श्रेणी के साबुनों का गुण भी, उसे बनाने में बरते गए माल के अनुसार, अलग-अलग होता है। इस श्रेणी के तेलों से साबुनक्रिया करते समय बरतन भी बड़े बड़े लेने पड़ते हैं। बरोजा से बने साबुन की टिकिया नहीं बनती, वह लुगदी-सा होता है। बरोजा का साबुन धोने के काम नहीं आता, हाँ, अन्य साबुनों का झाग बढ़ाने के लिए उसे दूसरे तेलों में मिलाया जाता है। यह, साबुन में तेलों की गन्ध को दबाने में भी, मदद करता है। बरोजा बहुधा धोने के साबुनों में मिलाया जाता है।

बरोजा नहाने के साबुनों में और उन धोने के साबुनों में नहीं मिलाया जाता जो रेशमी और ऊनी कपडे धोने के लिए तैयार किये जाते हैं। बरोजा का साबुन समय बीतने पर बेरंग या मटमैला-सा पड़ जाता है। झाग बढ़ाने, रंग सुन्दर पीला बनाने और धुलाई की ताकत बढ़ाने के लिए भी साबुनों में बरोजा मिलाया जाता है। बरोजा की मिलावट से साबुन नरम हो जाता और पानी में जल्दी घुलने लगता है। इस से तेलों और अन्य चिकनाइयों की दुर्गन्ध भी हट जाती है।

ख. अलग अलग तेल

क. अशुष्क तेल

१. नारियल का तेल—यह तेल खोपरे की गिरी से निकलता है। यह प्रान्त में, भारत के समुद्र-तटों पर और अन्य गरम देशों व द्वीपों में

सेण्टीग्रेड तापमान पर जम जाता और लगभग २६ डिग्री सेण्टीग्रेड पर पिघल जाता है। यह सब तेलों से पतला होता है। शुद्ध किया हुआ नारियल का तेल मक्खन की जगह बरता जाता है और घी में इसकी मिलावट भी की जाती है। यह केश-तेलों और शैम्पू आदि शृंगार-सामग्रियों के बनाने में भी काम आता है। मामूली नारियल का तेल हलकी मशीनों में 'ल्यूब्रिकैन्ट' (चिकनाहट पहुँचाने) का काम भी देता है। खार के तेज़ घोलों के साथ भी इसकी साबुन क्रिया तुरन्त हो जाती है, इसलिए यह ठण्डी तथा गरम दोनों विधियों से साबुन बनाने के लिए अधिक उपयोगी है।

इस तेल से बना हुआ साबुन सख्त और टूट जाने वाला होता है। यह नरम और सख्त पानियों में, और नमकीन पानी तक में, खूब झाग देता है। और इसलिये जहां सख्त पानी मिलता हो वहां भी धोने के लिये अधिक उपयोगी है। जहाजों पर सदा यही साबुन बरता जाता है और समुद्री साबुन कहलाता है। इस तेल के रासायनिक गुण ये हैं:—

१५° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व (स्पेसिफिक ग्रेविटी)	०.९२५
३०° सेण्टीग्रेड पर	०.९१५०
साबुन-क्रिया का मूल्य	२५५—२६०
आयोडीन वैल्यू	८—१०

२. खाकन तेल—यह तेल सदा हरी रहने वाली एक झाड़ी के बीजों से निकलता है। उसे लैटिन भाषा में साल्वाडोरा ओलिओयडस और देशी अन्य भाषाओं में खाकन, पीलू या झाल कहते हैं। यह झाडी गुजरात में और उत्तरी भारत में पायी जाती है। बीजों में लगभग ४२ प्रतिशत तेल होता है, जो या तो बीजों को घानी में पेरकर निकाला जाता है और या बीजों को पीसकर,

नोट १—स्पेसिफिक ग्रेविटि अथवा विशिष्ट गुरुत्वका मतलब यह है कि कोई वस्तु अपने समान जगह में आने वाले पानी से कितना गुणा भारी या हलकी है। तेल पानी से हलका होता है अतः नारियल के तेल का विशिष्ट गुरुत्व १५ डिग्री सेण्टीग्रेड ताप-मान पर ०.९२५ हुआ। ३० डिग्री सेण्टीग्रेड ताप-मान पर तेल ज्यादा पतला हो जायगा इसलिये उसका विशिष्ट गुरुत्व भी घट जायगा।

साबुनसाज़ी

१—प्रारम्भ की बातें

अपनी आदिम अवस्था में भी मनुष्य को अपना दिन-भर का काम करने के बाद अपना शरीर और बरतन आदि साफ करने की जरूरत महसूस होती थी। इसके लिए वह उन दिनों मिट्टी, दूध, मट्ठा, गोबर और कुछ वृक्षों की छालों, पत्तों आदि का उबला हुआ पानी इस्तैमाल करता था। आर्य-धर्म के ग्रन्थों में इन चीजों के प्रयोग का जिक्र है। नित्य की पूजा से पहले शरीर को शुद्ध करने का विधान है। कुछ धार्मिक संस्कारों और यज्ञों में तथा त्यौहारों के अवसर पर शरीर को मिट्टी, गोबर, या लकड़ी की राख से शुद्ध करने, सुगन्धित तेलों की मालिश करने, दही से धोने, हल्दी या अन्य सुगन्धित वनस्पतियां मलने का विधान भी है। बीमारी के बाद अब भी बहुत से वैद्य बीमार को कुम्भिया की छाल या नीम के पत्ते आदि वनस्पतियां डाल कर उबाले हुए पानी से स्नान कराते हैं। इन सबसे शरीर की शुद्धि और तरोताज़गी होती है। इन सब वनस्पतियों आदि से शरीर की दुर्गन्ध दूर होती है। इनमें रोग के कीटाणु नाश करने का गुण भी है। बाद को मनुष्य ने देखा कि सज्जी मिट्टी आदि खारी मिट्टियों में, अरीठों में और अन्य कई फलों के छिलकों में अधिक अच्छी तरह सफाई करनेवाले अंश मौजूद हैं। और ये चीजें आज तक इस काम में लाई जाती हैं। धोबी लोग रेशम या ऊनी कपड़े धोने के लिए अरीठों और उनके छिलकों को ज्यादा पसन्द करते हैं, क्योंकि उनसे कुछ हानि नहीं होती, जबकि मामूली साबुन से ये कपड़े प्रायः खराब हो जाते हैं। यद्यपि यह पता नहीं कि भारत में साबुन बनाना कब से शुरू हुआ तथापि यह निश्चित है कि कपड़ा धोने और उस पर से रंग के धब्बे आदि उड़ाने (ब्लीच करने) की कला प्राचीन भारतीय भी जानते थे, क्योंकि कपड़ों की रंगाई में पहले इसी की जरूरत होती है। विदेशी लेखकों की कल्पना यह है कि साबुन बनाने का आविष्कार पहले-पहल गॉल (फ्रेंच) लोगों ने किया। ईसवी सन प्रारम्भ होने से बहुत पहले भी यह कला मौजूद थी। पौम्पियाई (इटली का एक पुराना शहर) के पुराने खण्डहरों में साबुन बनाने के कारखाने पाये गये थे।

1133

पुराने समय में पश्चिमी देशों में लोग अपने घरों में साबुन बनाते थे। हरेक गृहिणी अपने लिए रसोई-घर की चिकनाई या चरबी से साबुन बना लेती थी और चूल्हे की राख को पानी में घोलकर नितार कर सोडा का घोल (लाई) तैयार कर लेती थी। खार का घोल खारीलानी नामक कुछ पौधों को जलाकर उनकी राख से भी तैयार किया जाता था। भारत में भी इसी काम के लिए इन पौधों की राख बनाई जाती थी। यूरोप में तेलों की रचना के विषय की खोजने और उसके साथ साथ लीब्लैंक की विधि से सोडा (धोबी सोडा) बनाने के आविष्कार ने साबुनसाज़ी के उद्योग में क्रान्ति कर दी।

साबुन बनाने में कुछेक रासायनिक क्रियाएं करनी पड़ती हैं। रासायनिक भाषा में कहा जाय तो साधारणतया सब साबुन, चाहे नहाने के चाहे धोने के, खार और चिकनाई वाले तेजाबों से मिलकर बने हुए लवण होते हैं, वे वानस्पतिक अथवा प्राणिज तेलों और चरबियों के साथ खार मिलाकर बनाये जाते हैं।

साबुन दो प्रकार के होते हैं—सख्त (हार्ड) और नरम (सॉफ्ट) पहली किस्म के साबुन कॉस्टिकसोडा से और दूसरी प्रकार के पोटॅश से बनते हैं। १. साबुन के बनाने में जो तेल और खार बरते जाते हैं, उनके अनुसार भी उसका श्रेणी-विभाजन किया जाता है। उदाहरणार्थ, सोडे से बने हुए साबुन सख्त और पोटॅश से बने हुए नरम। २. उनके श्रेणी-विभाजन का एक और ढंग, वे तरीके हैं जो उनके बनाने में बरते गये हों। जैसे—ठण्डे तरीके से बना हुआ साबुन, गरम तरीके से बना हुआ साबुन, अध-उबला साबुन, दानेदार साबुन आदि। ३. उनके श्रेणी-विभाजन का तीसरा ढंग उनके विविध उपयोगों के अनुसार है। जैसे, धोने का साबुन, नहाने का साबुन, कपड़ों का साबुन, फर्श का साबुन, डाक्टरी साबुन आदि।

नहाने के (टॉयलेट) साबुनों में हम बहुधा चन्दन का साबुन, खस का साबुन आदि नाम सुनते हैं। इन नामों का यह मतलब नहीं कि ये साबुन चन्दन या खस के तेल से बनाये गये हैं, बल्कि यह है कि उन में इस नाम की खुशबू डाली गयी है। इन खुशबुओं का काम साबुन को केवल खुशबूदार बना देना

है। वे धोने में कुछ मदद नहीं करतीं। धुलाई तो केवल तेलों और खारों के बने हुए साबुनों से होती है। धोने के साबुनों में नकली और असली का भेद भी करना चाहिए। असली साबुन में ७० से ७५ प्रतिशत तक सच्चा सूखा साबुन होता है। उनके महंगे होने पर भी बरतने में उन्ही से किफ़ायत होती है। इसके सिवा कपड़े पर उनका कोई बुरा असर नहीं होता। नकली साबुनों में कभी-कभी तो साबुन केवल १५ से २५ प्रतिशत तक होता है। बाक़ी सब सोडा, सिलीकेट, चीनी मिट्टी, स्टार्च, मैदा आदि मिलावटी चीज़ों और पानी की ही भरमार रहती है। ये साबुन सस्ते मिलने पर भी किफ़ायती नहीं होते और कपड़ों को भी नुक़सान पहुँचाते हैं। अच्छे साबुन खूब झाग देते और धुलाई जल्दी करते हैं। वे ज्यादा चलते हैं और जल्दी नहीं घिसते। वे न पसीजते हैं न सड़ते हैं। वे हड्डी की तरह इतने सख्त भी नहीं होते कि कपड़े को ही फाड़ दें। विभिन्न तेलों से बने साबुनों के विभिन्न गुण होते हैं। इसलिए बढ़िया साबुनों में आवश्यक गुण लाने को, विविध तेल उचित अनुपात में मिलाये जाते हैं। घटिया साबुन ज्यादातर नारियल के तेल से बनाये जाते हैं; क्योंकि यह तेल पानी अधिक उठा सकता है और फिरभी इसका साबुन सख्त रहता है तथा उसमें मिलावट भी आसानी से हो जाती है। अलुमिनियम, पारा, लोहा, जस्ता, सीसा आदि धातुओं से भी साबुन बनाये जाते हैं, परंतु उनका इस्तेमाल या तो डाक्टरी कामों में होता है या कारखानों में। ये साबुन पानी में नहीं घुलते और सफ़ाई बिलकुल नहीं करते।

२—साबुन के गुण

साधारण साबुन पानी में और स्पिरिट (अलकोहल) में घुल जाते हैं, परंतु पेट्रोल और किरासीन तेल में नहीं घुलते। साबुन ठण्डे पानी में धीरे-धीरे घुलता है, परन्तु गरम अथवा उबलते हुए पानी में जल्दी घुल जाता है और उससे दूधिया गंदले रङ्ग का घोल बनता है।

साबुन का पानी में कम या ज्यादा घुलना उन तेलों पर निर्भर करता है जो उसे बनाने में बरते गये हों। नारियल के तेल का साबुन बहुत जल्दी घुल जाता है। मूंगफली के तेल का साबुन भी खासा घुलता है, परन्तु महुए के तेल

ना कम घुलता है। एक ही तेल में बनाया हुआ पोटैश का साबुन ज्यादा घुल सकता है और सोडे का कम। साबुन का घोल चिपचिपा होता है और पतले घोल में भी काफी चिपचिपापन आता है।

साबुन में धोने की ताक़त उसके कई रासायनिक गुणों के कारण होती है। साबुन पानी में घुलने पर बहुत थोड़ी मात्रा में शुद्ध खार अलग हो जाता है। और यह खार कपड़ों पर लगे हुए तेल आदि के धब्बों को घोलकर साफ कर देता है। इसके सिवा साबुन के घोल में कपड़े की बनावट में घुस जाने तथा वहाँ से मैल को गला देने का गुण होता है। साबुन मलने से उत्पन्न हुआ झाग मैल को गला कर कपड़ा साफ कर देता है।

जिन घोलों में साबुन ०.५ प्रतिशत या इससे भी कम हो, उनमें धोने की ताक़त अच्छी होती है। घोल ज्यादा गाढ़ा होने पर धुलाई अच्छी नहीं होती, क्योंकि इससे घोल घना होकर चक्का बन जाता है और कपड़ों की बनावट में नहीं घुस पाता। नतीजा यह होता है कि साबुन बेकार जाता है। कपड़े धोने का सबसे बढ़िया तरीक़ा यह है कि या तो कपड़ों को साबुन के घोल में डाल दिया जाय या उनपर साबुन लगाकर कुछ देर तक रखा रहने दिया जाय और फिर मलकर पानी में भली भांति धो दिया जाय।

२—साबुन बनाने का कच्चा माल

मामूली साबुन वानस्पतिक और प्राणिज तेलों (चरबी) और चिकनाईवाले तेजाबों को खार (कॉस्टिक सोडा या पोटैश) के साथ मिलाने से बनता है। पानी एक सहायक वस्तु है, जिसके बिना साबुन बन ही नहीं सकता। यह तेल और खार के बीच रासायनिक क्रिया होने में सहायक होता है। मामूली खाने का नमक यद्यपि साबुन बनाने में सीधा सहायक नहीं होता, तथापि वह ग्लिसरीन व अन्य मैलों को गीले साबुन में से निकाल देता है। और चूंकि साबुन कुछ लवणों के घोलों में नहीं घुलता और ग्लिसरीन तथा अन्य मैल घुल जाते हैं, अतः नमक उनके साथ मिलकर साबुन को शुद्ध छोड़ देता है।

कभी–कभी मिलावट के लिए सोडा खार (धोबी सोडा), सोडा सिलिकेट, फ्रेंच चॉक (खरिया मिट्टी) और स्टार्च आदि अनेक वस्तुएं भी साबुन में डाली जाती हैं। इनके सिवा साबुन को सुन्दर और सुगन्धित बनाने के लिए खुशबुय, उड़ने वाले तेल और रंग भी मिलाये जाते हैं। रसायनशास्त्र की दृष्टि से इन सब चीज़ों को प्राणिज या वानस्पतिक (ऑरगॉनिक) और खनिज (इनऑरगॉनिक) इन दो विभागों में बांट सकते हैं। तेल, चरबियां, खुशबुएं, बरोजा, स्टार्च और अन्य इसी प्रकार के पदार्थ ऑरगॉनिक हैं, क्योंकि ये वनस्पतियों या प्राणियों के शरीरों से प्राप्त किये जाते हैं; और कॉस्टिक सोडा, पोटॅश, सोडा खार (धोबी सोडा) सोडा सिलिकेट, फ्रेंचचॉक इत्यादि इनऑरगॉनिक अथवा खनिज पदार्थ हैं; क्योंकि ये ज़मीन में से मिलते हैं। इन दोनों में भेद करने के लिये एक मोटी पहचान यह है कि प्राणिज पदार्थ जल सकते हैं और खनिज नहीं।

क—तेल और चिकनाइयाँ

तेल अपने गुणों के अनुसार निम्न तीन श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं—

१. वानस्पतिक अथवा स्थायी तेल—ये तेल वनस्पतियों के बीजों को कुचलने या पेरने से प्राप्त होते हैं। खारों के साथ मिलाने से इनका साबुन बन जाता है और ग्लिसरीन नामक एक अतिरिक्त पदार्थ उत्पन्न होता है। इनको साबुन के योग्य तेल भी कह सकते हैं।

२. खनिज तेल—ये ज़मीन में से निकले हुए कच्चे (क्रूड) पेट्रोलियम तेल का अर्क निकालकर प्राप्त किये जाते हैं। ये सब स्वयं अलग-अलग रासायनिक पदार्थ हैं। इनको खारों के साथ या अन्य किसी चीज़ के साथ मिलाने से साबुन नहीं बनता।

३. उड़ने वाले तेल—ये भाफ द्वारा अर्क निकालकर या वनस्पतियों को पानी में गलाकर प्राप्त किये जाते हैं। फूलों, जड़ों या छालों आदि से इत्र निकालना इस क्रिया का उदाहरण है। ये तेल हवा में उड़ जाते हैं। रासायनिक दृष्टि से नं० १ और २ के तेलों की भांति इनकी रचना एकसी नहीं होती। इनकी रासायनिक रचना विभिन्न प्रकार की होती है और इन में परस्पर भी कुछ समानता नहीं होती।

साबुनसाज के लिए खनिज तेल बेकाम हैं और उड़ने वाले तेलों का इस्तैमाल वह बहुत थोड़ी मात्रा में, साबुन को केवल सुगन्धित बनाने के लिए, करता है। साबुन जिस उद्देश्य से बनाया जाता है उसकी पूर्ति में, इन तेलों का, सुगन्ध देने के सिवाय कुछ काम नहीं। आगे के पृष्ठों में तेल शब्द का अर्थ केवल वानस्पतिक अथवा स्थायी तेल समझना चाहिए।

स्थायी अथवा साबुनी तेल भी दो प्रकार के हैं—१. वानस्पतिक २. प्राणिज। तेल और चिकनाई (Fat घी आदि) में वस्तुतः कुछ भेद नहीं। यह एक ही वस्तु के भौतिक रूपान्तर हैं, जो, ताप-मान में फर्क होने से उत्पन्न हो जाते हैं। उदाहरणार्थ अपने देशके गरम मौसम में जिस वस्तु को हम नारियल का तेल कहते हैं वही इग्लैण्ड आदि ठण्डे देशों में जमकर Fats (चिकनाइयों) में शुमार हो जाती है। नारियल का तेल गर्मियों में द्रव रहता है और सर्दियों में जमकर ठोस हो जाता है। इसी प्रकार घी सर्दियों में ठोस होता है और गर्मियों में गाढ़ा द्रव बन जाता है। और यदि उसे गरम स्थान पर रखा जाय तो वह द्रव ही रहता है। रासायनिक दृष्टि से तेलों और अन्य चिकनाइयों में कुछ भेद नहीं-चाहे वे वनस्पतिज हों चाहे प्राणिज। दोनों से साबुन बन जाता और ग्लिसरीन छूट जाता है। उनके अधिकतर रासायनिक और भौतिक गुण भी एक से हैं। वे पानी में नहीं घुलते। उनका स्पर्श चिकना होता है। कागज़ पर उनकी बूँद गिर जाय तो धब्बा पड़ जाता है, और वे पानी से हलके होते हैं।

स्थायी तेलों—वनस्पतिज और प्राणिज दोनों—की बनावट में दो चीज़ें होती हैं, एक ग्लिसरीन और दूसरी एक प्रकार के प्राणिज तेजाब जिनको चिकनाई वाले (Fatty) तेजाब कहते हैं। एक-एक तेल में कई प्रकार के चिकनाई वाले तेजाब और ग्लिसरीन मिले रहते हैं। इन चिकनाई वाले तेजाबों में किसी के कुछ और किसी के कुछ गुण होते हैं। इसी कारण विभिन्न तेलों से बने हुए साबुनों के भौतिक और रासायनिक गुण भी, उन-उन तेलों के चिकने तेजाबों के गुणों के अनुसार विभिन्न होते हैं। कुछ तेलों के साबुन देखने में मोम सरीखे और कुछ के दानेदार लगते हैं, कुछ के साबुनों का गुण स्थायी और कुछ का जल्दी ही नष्ट हो जाने वाला होता है। कुछ के साबुनों का

झाग मलाई-सरीखा और टिकाऊ होता है, और कुछ का झट बैठ जाता है। कुछ का साबुन पसीज कर भी सख्त रहता है और कुछ का थोड़े भी पानी से झट नरम पड़ जाता है। इस प्रकार, केवल नारियल के तेल से बना हुआ साबुन, मूंगफली के, महुए के या एरण्डी के तेल से बने साबुन से बिल्कुल भिन्न गुणों वाला होगा। जिस तरह कॉस्टिक सोडा को नमक के तेजाब (हाइड्रोक्लोरिक ऍसिड) से मिलाने पर एक लवण बन जाता है जो कि साधारण खाने का नमक है, इसी प्रकार, रासायनिक दृष्टि से, खारों के साथ चिकने तेजाब मिलकर जो लवण बनता है वही साबुन है। रासायनिक दृष्टि से शुद्ध तथा सूखे साबुन में, खार की अपेक्षा चिकने भाग का वज़न बहुत अधिक होता है। किसी भी वनस्पतिज अथवा प्राणिज तेल (स्थायी तेल) से साबुन बन सकता है। वनस्पतिज तेल अपनी रासायनिक रचना के अनुसार तीन श्रेणियों में बांटे गये हैं। इस श्रेणी–विभाग का आधार उनके सूखने, और बिल्कुल न सूखने के गुण भी हैं। साबुन बनाते हुए, तेलों को इस तरह मिलाया जाता है कि तैयार वस्तु में सब अभीष्ट गुण हों। अर्थात् वह नरम न हो, पसीजे नहीं, जल्दी बिगड़े नहीं, काफी सख्त हो, झाग अच्छी तरह दे और मैल भी खूब काटे। जो तेल हवा लगने पर सूख जायँ वे शुष्क तेल कहलाते हैं। वे तेल वारनिश आदि बनाने में काम आते हैं। कुछ तेल हवा लगने पर गाढ़े हो जाते हैं, उन्हें अर्ध–शुष्क कहते हैं। अशुष्क तेल हवा लगने पर भी बहुत नहीं बदलते और प्रायः अपनी असली हालत में ही बने रहते हैं।

भारतवर्ष में तेलों के बीज बहुत प्रकार के होते हैं। परन्तु साबुनसाज के काम के मुख्यतया निम्न लिखित हैं:—

१. अशुष्क १. मुंगफली, २. नीम, ३. महुआ, ४. मलाबार चरबी या मनौवर की चरबी, ५. कोकम, ६. एरण्ड ७. नारियल, ८ खाकन, ९. मैरोटी और १० करंजिया।

२. अर्ध-शुष्क–१ बिनौले और २. तिल

३. शुष्क–१. अलसी, २ खरसानी और ३. कुसुम्ब।

तेलों की रचना और उनसे बने हुए सोडा या पोटैश के साबुन के गुणों के अनुसार, तेलों का निम्न श्रेणी-विभाजन किया गया है:—

१. नारियल के तेल की श्रेणी—नारियल, खाकन, मैरोटी आदि।

२. मूंगफली के तेल की श्रेणी—मूंगफली, तिल, खरसानी, बिनौला आदि।

३. महुए के तेल की श्रेणी—महुआ, नीम, करंजिया, घी आदि।

४. चरबी की श्रेणी—प्राणिज चिकनाइयां (फैट) कोकम, मलावार चरबी आदि।

५. अलसी की श्रेणी—अलसी, कुसुम्ब।

६. बरोजा या चिकने तेजाबों की श्रेणी—बरोजा और ऐसे चिकने तेजाब जो तेलों में एरण्डी के बीज का खमीरा डालने से बनते हैं।

साबुनसाज़ की दृष्टि से इन सब श्रेणियों की विशेषताएं अलग अलग हैं। एक श्रेणी के तेल, साबुन बनाने की और भौतिक दृष्टि से प्रायः एकसी विशेषतायें रखते हैं।

नारियल के तेल की श्रेणी—इस श्रेणी के तेलों से पूरा साबन बनाने के लिए (पूर्ण सैपोनिफिकेशन अर्थात् तेल व खार में पूर्ण रासायनिक क्रिया के लिए) अन्य तेलों की अपेक्षा अधिक खार की ज़रूरत होती है। ये पानी ज्यादा उठा सकते हैं और इनमें सोडा सिलिकेट, धोबी सोडा, खाने का नमक और चीनी मिट्टी आदि मिलावटी चीज़ें भी अधिक खप सकती हैं। इनकी रासायनिक क्रिया (सैपोनिफ़िकेशन) खार के तेज़ घोल में भी सुगमता से हो जाती है, और एक बार 'सैपोनिफ़िकेशन' (साबुन बनना) शुरू हो जाने पर बहुत जल्दी-जल्दी होता है और इतनी गरमी निकलती है कि सब चीज़ें खूब फूल आती हैं। साबुन उफन कर बरतन के बाहर न निकल आवे इसकी बड़ी एहतियात रखनी पड़ती है। इस श्रेणी के तेल, विशेषतः नारियल का तेल, ठण्डे तरीके से साबुन बनाने के लिए विशेष उपयोगी हैं। इन तेलों के बने हुए साबुनों में दाना डालने के लिए नमक की भी बहुत ज़रूरत पड़ती है, और दानेदार साबुन नमकीन पानी

बहुत उठा सकते हैं। वे सख्त, चोट से टूट जानेवाले, सफेद और पतला परन्तु अच्छा झाग देने वाले होते हैं। इन साबुनों से सख्त अर्थात चूने वाले यानी खारे पानी में भी कपडा धोया जा सकता है, क्योंकि ये उस पानी में भी खासे घुल जाते हैं। इनमें 'सैपौनिफ़िकेशन' की क्रिया पूर्ण हो जाने पर भी, ये साबुन शरीर की खाल को काटते हैं। इस श्रेणी के तेलों से, अन्य तेलों की अपेक्षा, साबुन बनता भी अधिक है और लगभग १२ प्रतिशत ग्लिसरीन अलग हो जाता है।

मूंगफली के तेल की श्रेणी—इस श्रेणी के अधिकतर तेल अशुष्क या अर्ध-शुष्क होते हैं। परन्तु कुछ शुष्क भी होते हैं। इस श्रेणी के साबुनों की विशेषताएं वही हैं जो ओलिइक तेजाब के साबुन की। इन तेलों में 'सैपोनिफि-केशन' (साबुन बनने की रासायनिक क्रिया) शुरू करने के लिए खार के १५ से २५ *बोमी डिग्री तक हलके घोल की आवश्यकता होती है। इस श्रेणी के साबुन देखने में मोम-से, बहुत छोटे दाने के और नरम होते हैं। उनमें नमकीन पानी यानी नमक के घोल से, दाना डाला जा सकता अर्थात् उनका मैल दूर किया जा सकता है। इन साबुनों से झाग पतला परन्तु बहुत ज्यादा उठता है और वह जल्दी ही बैठ जाता है। यदि हवा में नमी हो तो वे पसीज भी जाते हैं। बिनौले के तेल की एक विशेषता यह है कि उसमें 'सैपोनिफ़िकेशन' (साबुन बनने की क्रिया) आसानी से आरम्भ नहीं होती और नमक का पानी मिलाने पर जो दानेदार साबुन बनता है वह खासी मात्रा में नमकीन पानी उठाये रहता है।

---

* जिस प्रकार ताप यानी गरमी नापने के यन्त्र का नाम थर्मामीटर है उसी प्रकार किसी भी द्रव की घनता यानी गाढ़ापन या पतलापन नापने के लिए जो यन्त्र होता है उसका नाम हाइड्रोमीटर है। इसे बोमी नामक एक फ्रेंच वैज्ञानिक ने बनाया था, इस कारण इस के नाप को बोमी डिग्री कहते हैं। बोमी हाइड्रोमीटर दो प्रकार का होता है। एक पानी से भारी द्रवों की घनता नापने के लिए और दूसरा, पानी से हलके द्रवों की। पहला हाइड्रोमीटर साफ़ पानी में शून्य डिग्री तक और १५ प्रतिशत नमक के घोल में १५ डिग्री तक डूबता है।

दूसरा हाइड्रोमीटर १० प्रतिशत नमक के घोल में शून्य डिग्री तक डूबता है और साफ पानी में १० डिग्री तक। दोनों हाइड्रोमीटरों पर बाकी निशान भी इसी हिसाब से लगे होते हैं।

महुआ तेल की श्रेणी—इस श्रेणी के तेल अध-जमे होते हैं। उनका साबुन भी जल्दी बनता और उसमें दाना भी जल्दी पड़ता है। इस श्रेणी में महुए का तेल भारत के साबुन-उद्योग के लिए एक महत्त्वपूर्ण चिकनाई है। इन तेलों के साबुन मूंगफली की श्रेणी और चरबी की श्रेणी के दरमियानी होते हैं। उनसे अच्छा मलाई-सा झाग बनता है और वे नहाने तथा धोने दोनों में काम दे सकते हैं।

चरबी की श्रेणी—मूंगफली के और अन्य वनस्पतियों के तेलों में ओलीइक तेज़ाब की बड़ी मात्रा होती है, परन्तु इस श्रेणी की चिकनाइयों में ओलीइन थोड़ी और स्टीअरीन व पॉमिटीन बड़ी मात्रा में होते हैं। ये तेल ठोस जमे हुए होते हैं। इस श्रेणी के चिकने तेज़ाब—स्टीअरिक व पॉमिटिक ऐसिड—ज्यादा गरमी देने से पिघलते हैं। इस श्रेणी के तेलों में खार के हलके घोल से 'सैपोनिफ़िकेशन' (साबुन बनने की क्रिया) शुरू हो जाता है। ड्रूपा चरबी और कोकम बटर में तो 'सैपोनिफ़िकेशन' (साबुन बनने की क्रिया) झट शुरू हो जाती है, क्योंकि इन दोनों में शुद्ध चिकने तेज़ाबों की खासी मात्रा सदा मौजूद रहती है।

इस श्रेणी के साबुन सख्त होते हैं, परन्तु उनसे झाग अच्छा नहीं बनता। हाँ, अन्य तेलों को उनमें मिला दिया जाय तो उनका झाग भी मलाई सरीखा और टिकाऊ हो जाता है। ये साबुन थोड़ा ही नमक मिलाने से बिना कठिनाई दानेदार बन जाते हैं। साधारणतया इन साबुनों का रङ्ग सफेद होता है। चरबी के साबुन पानी में कम घुलते हैं और सख्त पानी में तो इनसे दही-सा बन जाता है। इसलिए चरबी को मूंगफली या अन्य तेलों में मिला देते हैं। इसमें से ९ प्रतिशत गिलसरीन निकलता है।

अलसी के तेल की श्रेणी—इस श्रेणी के तेल साधारणतया सख्त साबुन बनाने के काम के नहीं हैं। इन साबुनों की टिकिया नहीं बनती। ये बहुत नरम—वैज़लीन सरीखे—होते हैं। तो भी ये नरम साबुनों के व्यापारिक उपयोगों में बरते जाते हैं। अलसी के साबुन से एक खास क़िस्म की बदबू आती है। इन तेलों में साबुन-क्रिया (सैपोनिफ़िकेशन) झट शुरू हो जाती है। साबुन

बहुतायत से उपजता है। समुद्र-किनारे का नमकीन हवा-पानी इस फल को बहुतायत से उपजाने के लिये विशेष अनुकूल है। देश के अन्दरूनी भाग में यह इतनी अधिकता से नहीं उपजता। इसका पेड लम्बा, ऊंचा चला जाता है और अपनी जात के अनुसार छठे से बारहवें वर्ष में फल देने लगता है। इसकी जातियां भी २५–३० हैं। जहां यह पेड़ होता है, वहां के आर्थिक जीवन को बनाने बिगाड़ने में बड़ा भारी भाग लेता है, क्योंकि इसका कोई हिस्सा ऐसा नहीं जो किसी न किसी काम न आता हो। इसीलिये इसको सचमुच कल्पवृक्ष कह सकते हैं। फल के ऊपर एक रेशेदार सख्त छिलका होता है, जिसमें से रेशे अलग करके रस्से आदि बनाये जाते हैं। रेशा अलग करने के बाद, फल के दो टुकड़े कर दिये जाते हैं और उन्हें धूप में सूखने को रख दिया जाता है। सूखकर अन्दर का नरम गूदा सख्त छिलके से आप ही अलग हो जाता है, और यही खोपरा कहलाता है। सख्त छिलके ज्यादातर ईन्धन के काम आते हैं। ग्रामीण लोग उनके प्याले-प्यालियां भी बना लेते हैं। उनके बटन तथा अन्य अनेक सुन्दर वस्तुएं भी बनती हैं। इन छिलकों से एक खास कोयला बनाया जाता है। उसमें गैसें चूसने और रंग जज्ब करने की शक्ति बहुत होती है। अतः यह कोयला, दुर्गन्ध दूर करने तथा रंग उडाने के काम भी आता है। छिलकों को जलाते हुए जो तेल निकलता है वह दवाई के तौर पर काम आता है।

सूखे खोपरे में लगभग ६५% तेल होता है और कोल्हू में पेरने से ६०% निकल भी आता है। १० से १२% तक तेल खली में भी रह जाता है। इसलिये वह एक उत्तम भोज्य-पदार्थ का काम देती है। हरे नारियल में से ताज़ा नरम गूदा खुरच कर और उसे पानी में उबालकर भी तेल निकाला जाता है। इस तरह तेल पानी के ऊपर आ जाता है और वहां से उसे इकठा कर लिया जाता है। नारियल के तेल की एक खासियत यह है कि वह लगभग २० डिग्री ऽ

ऽ थर्मामीटरों पर निशान कई प्रकार के लगाये जाते हैं। एक तरीका यह है कि पानी जमने का ताप-मान शून्य डिग्री और उबलने का १०० डिग्री मानकर निशान लगाये जायँ। इसे सेण्टीग्रेड कहते हैं। दूसरा तरीका यह है कि पानी जमने के ताप-मान को ३२ डिग्री और उबलने के ताप-मान को २१२ डिग्री मानकर निशान लगाये जायँ। इसे फारनहाइट कहते हैं। जिस थरमामीटर से नाप लिया जाय, उसीका नाम लेकर उतनी डिग्री कही जाती है।

पानी में उबाल कर, उसकी सतह पर से इकट्ठा कर लिया जाता है। इस तरह निकले हुए तेल में अनेक मैल होते हैं, और इस कारण साबुन बनाने से पहले उसे शुद्ध करना पड़ता है। साधारण तापमान पर यह तेल जमा रहता है। रङ्ग इसका हरा पीला, गन्ध अप्रिय होती है। इसके साबुन के गुण नारियल के साबुन से मिलते-जुलते हैं। तेल की रासायनिक विशेषताएं निम्न हैं:—

१५° डिग्री सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९२०५ से ०.९२४० तक
पिघलाव विन्दु (जिस तापमान पर यह पिघले)	४०° से ४१° सेण्टीग्रेड तक
साबुन क्रिया का मूल्य	२४३ से २५२ तक
आयोडीन वैल्यू	१२–१६
साबुन-क्रिया से बचा हुआ भाग	०.८० से १.३४% तक

३. मैरोटी तेल—इसे भारतीय चालमुगरा भी कहते हैं। इसका लैटिन नाम हिडनोकारपस विगाटियाना है। तेल इस वृक्ष के बीजों से निकलता है। यह पेड़ भारत के पश्चिमी समुद्र-तट पर कोंकण से ट्रावनकोर तक उपजता है। बीजों में ६० प्रतिशत तक तेल होता है। साधारण तापमान पर तेल अधजमा, पीले से रंग का और एक खास गन्ध का होता है। डाक्टर लोग इस तेल को खाल के रोगों में और कोढ़ के इलाज में चालमुगरा के तेल की जगह भी काम में लाते हैं। इस तेल का साबुन खासा सख्त होता और उमदा झाग देता है। इससे धोने और नहाने के दोनों काम लिए जा सकते हैं। तेल के रासायनिक और भौतिक गुण निम्न हैं:—

नोट २—साबुन क्रिया के मूल्य से अभिप्राय यह है कि एक ग्राम का पूर्ण साबुन बनाने के लिए कितने मिलीग्राम कॉस्टिक पोटेश लगेगा। २५५–२६० साबुन क्रिया के मूल्य (सैपानिफिकेशन वैल्यू) का अर्थ यह हुआ कि एक ग्राम तेल २५५ से २६० तक मिली ग्राम कॉस्टिक पोटेश के साथ मिलकर पूर्ण साबुन बन जाता है। १ ग्राम=१०० सेण्टीग्राम=१००० मिली-ग्राम।

नोट ३—आयोडीन वैल्यू का मतलब यह है कि एक ग्राम तेल कितने सेन्टीग्राम आयोडीन को जज्ब कर सकता है।

२५° डिग्री सेन्टीग्रेड पर	विशिष्ट गुरुत्व ·९५५
पिघलाव–बिन्दु	२१ से २४ डिग्री सेन्टीग्रेड तक
जमाव–बिन्दु	१७ से १८ डिग्री सेन्टीग्रेड तक
साबुन–क्रिया का मूल्य	२०२ से २०७ तक
आयोडिन वैल्यू	९२ से ९६ तक

४. **मलाबार चरबी**—मलाबार चरबी उर्फ सनोबर की चिकनाई एक सदाबहार वृक्ष के बीजों से निकाली जाती है। इसका लैटिन नाम वैटीरिया इण्डिका है। यह पेड़ पश्चिमी घाटों पर कर्नाटक से ट्रावनकोर तक और मैसूर व मलाबार में होता है। इससे वारनिश की एक कीमती गोंद निकलती है जो इण्डियन गम (गोंद) या डामर के नाम से मशहूर है। उसे निकालने के लिए पेड़ में एक खांचा काट दिया जाता है। बीजों में लगभग २५% तेल होता है। तेल निकालने के लिए बीजों को भूनकर पानी में उबालते हैं और उसकी सतह पर आये हुए तेल को एकत्र कर लेते हैं। जब चिकनाई ताज़ा होती है तब उसका रङ्ग कुछ हलका हरा होता है परन्तु वह सूरज की रोशनी लगने से उड़ जाता है। इसका स्वाद अच्छा होता है और खाने के काम आता है। युरोप में इसे चॉकोलेट (एक अंग्रेजी मिठाई) में डालते हैं। इसी कारण इसका नाम 'कर्नाटक का वनस्पति घी' भी पड़ गया है। इससे नहाने व धोने का बहुत बढ़िया साबुन बनता है। साबुन बनाने में इसके सब गुण जानवरों की चरबी से मिलते-जुलते हैं और इसलिए इसे उसकी जगह काम में लाया जा सकता है। तेल के गुण ये हैं:—

१५ डिग्री सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९१५
पिघलाव-बिन्दु	३७° डिग्री सेण्टीग्रेड
साबुन-क्रिया का मूल्य	१८८–१८९
आयोडीन वैल्यू	३७–३८

५. **कोकम बटर:**—यह गार्निसिया इण्डिका नामक वृक्षके बीजों से निकलता है। वृक्ष कोंकण, कर्नाटक, कुर्ग, वाइनाड, निलगिरी आदि के जंगलों

में पैदा होता है। इसके फल का छिलका स्वाद में खट्टा होता और खाने-पकाने तथा दवाई के काम में आता है। इसके बीजों को सुखाकर, पीसकर, पानी में उबालने से तेल ऊपर आजाता है और वहां से इकट्ठा कर लेते हैं, तथा इसकी गोल या लम्बोतरी टिकियें बना लेते हैं। इसका रंग भूरा-सफेद और स्वाद अच्छा होता है। साबुन इसका सख्त बनता है। साबुन-क्रिया में साधारणतया इसके सब गुण चरबी से मिलते हैं। इस कारण नहाने या धोने का बढ़िया साबुन बनाने के लिए इसे चरबी की जगह इस्तेमाल कर सकते हैं। यह खाल को सिकोड़ने, शान्ति और ठण्डक पहुँचाने और मालिश करने के लिए, औषधि-रूप से भी प्रयुक्त होता है। तेल के रासायनिक गुण ये हैं:—

४०° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.८९५
पिघलाव-बिन्दु	४०° से ४५° सेण्टीग्रेड
साबुन-क्रिया का मूल्य	१८१–१८२
आयोडीन वैल्यू	३६–३७

६. महुआ तेल—महुए का तेल बस्सिया नामक वनस्पति के विविध प्रकार के वृक्षों के बीजों से निकलता है। भारत में मुख्यतया इसकी तीन किस्में मिलती हैं।

१. बस्सिया लैटिफ़ोला—पश्चिमी बंगाल, अवध, कुमाऊं, गुजरात, कर्नाटक और बरमा में

२. बस्सिया लौंगिफोला—दक्षिण भारत और कोंकण में।

३. बस्सिया ब्यूटिरेशिया—उत्तर भारत में।

महुए के फूल मार्च और अप्रैल के महीनों में एकत्र किये जाते हैं। इनसे देशी शराब बहुत बनती है। एक-एक पेड़ से चार मन तक फूल झड़ते हैं। बीज की गिरी में ५० से ५५% तक तेल होता है। इसकी खली खाने के काम नहीं आती, हां, खाद का और कृमि-नाशक का काम देती है।

मामूली ताप-मान पर तेल अध-जमा रहता है। रंग मैला पीला और गन्ध खास ही होती है, परन्तु अप्रिय नहीं होती। भारत में साबुन बनाने का

यह खास तेल है। इसका साबुन सख्त होता है और सुगमता से दानेदार बन सकता है। धुलाई अच्छी करता और झाग मलाई-सा देता है। अन्य तेलों में मिलाकर बनाने से साबुन सख्त और अच्छा हो जाता है। साबुन-क्रिया (सैपोनिफ़िकेशन) इसमें जल्द होती है। यह तेल खाने और मोम-बत्तियां बनाने के काम भी आता है। तीनों प्रकार के तेलों की विशेषताएं ये हैं:—

	ब० लैटीफोलिया	ब० लौंगिफोलिया	ब० ब्यूटिरेशिया
१००।११५ सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.८७०	०.८६०	०.८६२
साबुन-क्रिया मूल्य	१९४	२००	१९५
आयोडीन वैल्यू	५०	६०	४३
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	२%	२%	२.८%

७. **नीम का तेल**—यह तेल नीम के बीजों से निकलता है। इस पेड़ का लैटिन नाम मेलिया अंजादिरेक्ता है। यह आप ही खूब उगता है और दक्खन, कर्नाटक तथा अन्य कई प्रान्तों में बोया भी जाता है। इससे एक गोंद भी निकलती है। बीजों की गिरी में ४० से ४५% तक तेल होता है जो घानी में पेर कर निकाला जाता है। इसका तेल, पत्ते तथा अन्य भाग देशी दवाइयों में बहुत काम आते हैं। तेल मामूली तापमान पर अधजमा रहता है। इसका रंग हरा-सा, स्वाद कड़वा और गंध बुरी होती है। इसे खाल के रोगों में लगाते हैं। इसे शुद्ध करके साबुन बनाया जा सकता है। साबुन क्रिया इसमें जल्दी हो जाता है और साबुन सख्त, दानेदार, अच्छा झाग देने वाला बनता है। साबुन में दाना डालने से बुरी गन्ध अधिकतर जाती रहती है। साबुन फोड़े-फुन्सियों आदि पर भी लगाया जाता है (ऐण्टीसेप्टिक होता है)। तेल की विशेषताएं निम्न हैं:—

३०° सेण्टीग्रेड पर तेल का विशिष्ट गुरुत्व	०.९१४३
साबुन-क्रिया मूल्य	१९६
आयोडीन वैल्यू	६९
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	२ से २.५%

८. करंजिया तेल—इसका पेड़ भारत में सर्वत्र होता है। इसका लैटिन नाम पेंगोमिया ग्लाब्रा है। इसके बीजों में तेल की मात्रा ३० से ४०% तक होती है। तेल का रंग मैला पीला और गन्ध बुरी होती है। खाल के रोगों में यह 'ऐण्टीसेप्टिक' (पीप निरोधक) का काम देता है। अधिकतर यह रोशनी के काम आता है। साधारण ताप-मान पर अध-जमा रहता है। इसका साबुन भी ऐण्टिसेप्टिक होता है। तेल की विशेषताएं ये हैं।

४०° डिग्री पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९२४
साबुन-क्रिया मूल्य	१८६
आयोडीन वैल्यू	८६ से ८८
साबुन क्रिया में न लगने वाला भाग	३ से ९%

९. मूंगफली का तेल—मूंगफली की कई क़िस्में होती हैं। इसका लैटिन नाम आरचिस हाइपोजिया है। एक फली में एक या दो दाने होते हैं। किसी किसी में ज्यादा भी होते हैं। पौधों की शाखाएं बहुत होती हैं और फूल निकलने के बाद वे फिर ज़मीन में दबा दी जाती हैं, जहां कि फली बड़ी हो जाती है। इसीलिए इसे अंग्रेजी में 'ग्राउन्ड नट' अर्थात् भूमि का फल कहते हैं। फलियों को फसल के ठीक समय निकाल लेना चाहिए, वरना उनमें अंकुर फूटने लगते हैं और तेल बिगड़ जाता है। मूंगफली चीन, भारत, अफ्रीका, अमरीका, जापान और स्पेन में बहुत होती है। भारत के बम्बई और मद्रास प्रांतों में यह बड़ी तादाद में बोई जाती है। हाल के बरसों में भारत में इसकी पैदावार बहुत ही बढ़ गई है और अब तो खाने के तेलों में यह सबसे सस्ता तेल है। इसका साबुन नरम होता है, झाग बहुत आहिस्ता आहिस्ता देता है परन्तु सफाई खासी करता है। खाल पर इसका असर बहुत हलका होता है इस कारण नहाने के साबुनों में इसे मिला देना अच्छा है। साबुनक्रिया इसमें जल्दी नहीं होती। दाना आसानी से पड़ जाता है। तेल की विशेषताएं ये हैं :—

२५° सेण्टग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९४८
साबुन-क्रिया का मूल्य	१८६ से १८८

आयोडिन वैल्यू	९०
साबुन-क्रियाओं में न लगने वाला भाग	०.२२ प्रतिशत

१०. एरण्डी का तेल—एरण्डी की भी कई किस्में हैं। इस पौधे का लैटिन नाम रिसिनस कम्यूनिस है। यह पौधा जंगली भी होता है और इसकी खेती भी होती है। बीजों में ५० से ५५% तक तेल होता है। अच्छी तरह छिले हुए बीजों से बिना गरमी दिये निकाला हुआ तेल दस्तावर प्रयोजन के लिये औषधि में काम आता है। गरमी देकर निकाला हुआ तेल ल्यूब्रिकैण्ट (मशीनों के तेल) और 'टर्की रेड ऑयल' बनाने के काम आता है। यह तेल अकेला साबुन बनाने के काम नहीं आता, परन्तु अन्य तेलों में १० से १५% तक मिला देने से साबुन की पारदर्शकता बढ़ जाती और उसकी बनावट सुधर जाती है। इस तेल से केश-तेल, मुँह पर मलने की क्रीमें आदि शृंगार-सामग्रियां भी बनती हैं। रोशनी इसकी बहुत अच्छी होती है। यह बहुत स्निग्ध होता है और अन्य सब तेलों से इसकी एक विशेषता यह है कि यह अलकोहल में घुल जाता है। साबुन क्रिया इसमें झट हो जाती है। इसकी विशेषताएं ये हैं:—

१५.५° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९६५
साबुन-क्रिया का मूल्य	१७७ से १८२
आयोडीन वैल्यू	८२ से ९०
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	०.३ से १.८%

ख. अर्धशुष्क तेल

१. बिनौलों का तेल:—यह तेल विविध प्रकार की कपास के बीजों से निकलता है। अमरीका में बिनौलों से तेल निकालने का व्यवसाय बहुत बड़ा है और वहां बिनौला लगभग १०० व्यावसायिक उपयोगों में लाया जाता है। शायद ही कोई अमरीकन घर ऐसा हो जिस में बिनौलों से बनी हुई एक-न-एक चीज—दावात से लेकर खाने की चीज़ तक—न हो। भारत में तो बिनौले प्रायः पशुओं को खिला दिये जाते हैं। इनका व्यावसायिक उपयोग कुछ नहीं होता। बिनौलों मे उनकी किस्म के अनुसार १५ से २२ प्रतिशत तक तेल

होता है। पहले बीजों का रुआं, मिट्टी आदि साफ़ करके उन्हें छील लिया जाता है। फिर उनके नरम गूदे को पीसा, पकाया और पेरा जाता है। अब जो तेल निकलता है उसका रंग काला-मटमैला होता है। इसे खार द्वारा साफ़ करने पर यह पीला-सा हो जाता है और खाने के काम आता है। बिनौलों के छिल्के में 'सेल्युलोज़' बहुत होता है और इसलिये यह कागज़ के व्यवसाय में काम आता है। खली इसकी बहुत पौष्टिक और बिनौलों से भी अधिक अच्छा भोजन है। इससे खाद का काम भी ले सकते हैं। बिनौलों की भूसी भी उत्तम भोजन है और भूसे अथवा घास की जगह पशुओं को खिलायी जा सकती है। साबुन बनाने में साफ़ किया और बिना साफ़ किया दोनों भी तेल काम आते हैं। बिना साफ़ किये में साबुन-क्रिया (सैपोनिफिकेशन) तुरन्त शुरू हो जाती है, परन्तु साफ़ किये में उसे शुरू करने में कुछ कठिनाई पड़ती है। साबुन इसका नरम होता है और धुलाई अच्छी करता है। झाग पतला होता और जल्दी बैठ जाता है। यदि साबुन-क्रिया ठीक तरह और पूरी न हो तो साबुन सड़ जाता और कुछ समय बाद उसका रंग उड़ जाता है। तेल साफ़ करते हुए जो खार वाला अंश बच जाता है उसको भी कास्टिक सोडा या नमक से साफ़ करके उसका साबुन बन जाता है। तेल की खासियतें ये हैं:—

१५° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९१ से ०.९२
साबुन-क्रिया का मूल्य	१९० से १९५
आयोडिन वैल्यू	१०५ से ११५
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	०.८ से १.५ प्रतिशत

२. तिल्ली का तेल—तिल के पौधे का लैटिन नाम सीसेमम इण्डिकम है। इसके दाने बहुत छोटे-छोटे और भूरे, लाल, काले तथा सफेद रंग के होते हैं। सफेद तिल सबसे बढ़िया माना जाता है। तिलों में ५० से ६० फी सदी तक तेल होता है, जो घानी (कोल्हू) में पेरने से आसानी से निकल आता है। भारत में इसे खाने के लिए बहुत अच्छा तेल माना जाता है। इसका रंग पीला-भूरा और स्वाद अच्छा मेवों का-सा होता है। यह तेल दवाइयां और श्रृंगार-सामग्रियां बनाने और जलाने के काम भी आता है। विदेशों में इसका साबुन भी बनाते

हैं। साबुन बनाने में इसके गुण मूंगफली के तेल से मिलते हैं। इसका साबुन नरम, पतली झाग देने वाला और मैल अच्छा काटने वाला होता है। इसकी खली अच्छा पुष्टिकारक भोजन है। तेल की विशेषताएं ये हैं:–

२५° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९१ से ०.९२
साबुन-क्रिया का मूल्य	१९०
आयोडिन वैल्यू	१०९ से १११
साबुन-क्रियाओं में न लगने वाला भाग	१.७३ प्रतिशत

३. सरसों का तेल—इसका लैटिन नाम ब्रेसिका है। इसे तोड़िया भी कहते हैं। दानों में ३५ से ४५ प्रतिशत तक तेल होता है। तेल का रंग पीला-भूरा और स्वाद कुछ तीखा (चरपरा) होता है। इसकी स्निग्धता के कारण इसे मशीनों में भी डालते हैं। भारत में यह ज्यादातर खाने और जलाने के काम आता है। इसका साबुन भी बन सकता है, क्योंकि इस काम में इसके गुण बहुत-कुछ मूंगफली के तेल के समीप पहुँचते हैं, परन्तु इसका साबुन उसमें नरम बनता है। तेल की खासियतें ये हैं:—

१५.५° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९१३२
साबुन-क्रिया का मूल्य	१७० से १७९
आयोडिन वैल्यू	९४–१०२

ग. शुष्क तेल

१. अलसी का तेल—इसके पौधे का लैटिन नाम लीनम यूटिलिसिमम् है। ठण्डे देशों में इसकी खेती पौधे के रेशे के लिए की जाती है जो सन के समान होता है, और उसके कपड़े, रस्से वग़ैरह बनते हैं। भारत में यहां की आब-हवा के कारण इसकी खेती केवल तेल के बीजों के लिए की जाती है, जिनमें लगभग ४० प्रतिशत तेल होता है। इस देश के पौधों का रेशा मोटा होता है। कागज़ बनाने के लिए यह बहुत बढ़िया चीज़ है। व्यावसायिक दृष्टि से इसका तेल बड़ा क़ीमती है। उससे उबले हुए तेल, रोग़न, वारनिशें, छापे की स्याहियाँ,

मोमजामा, लिनोलियम, नकली चमड़ा आदि बहुत चीज़ें बनती हैं। साबुन इसका नरम बनता है। वह पार-दर्शक होता और देखने में भूरी वैजलीन-सा लगता है। पानी में झट घुल जाता है परन्तु नरमी के कारण और अजीब गन्ध के कारण घरों में अथवा नहाने के काम नहीं आता। तेल की विशेषताएं ये हैं:–

१५° सेण्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९३५
साबुन-क्रिया का मूल्य	१९२–१९५
आयोडिन वैल्यू	१७१–२०१

२. कुसुम्भी का तेल—इसका अँग्रेजी नाम सैफ्लावर और लैटिन कारथोमस टाइनिटोरियम है। इसकी खेती बम्बई प्रान्त में तथा भारत के अन्य भागों में होती है। दानों में ३० से ३५ प्रतिशत तक तेल होता है। पहले इसके फूलों से केसर जैसा एक रङ्ग बनता था, जिसे कुसुम्भ कहते थे। इसका तेल हल्के पीले रङ्ग का होता है, और हवा में सूख जाता है। इसी कारण यह चित्रकारों के रङ्ग, रोगन और वारनिश बनाने के लिए उपयोगी है। रोगन अथवा अफ़ीदी मोम, इसी तेल से बनता है। यह तेल ज्यादातर खाया जाता है। उसका साबुन भी बन सकता है। इस काम में यह तिल के तेल से मिलता जुलता है। साबुन इसका नरम होता है। इसकी खासियतें निम्न हैं:—

१५.५° सेन्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९२४३
साबुन-क्रिया का मूल्य	१९०
आयोडिन वैल्यू	१५०
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	१ प्रतिशत

३. खरसानी तेल—इसके पौधे का नाम गुइ जोतिया आबिसीनिका है। यह बम्बई में और भारत के अन्य अनेक भागों में बोया जाता है। दानों में तेल ४० से ५० प्रतिशत तक होता है और घानी में पेरने से बआसानी निकल आता है। इसका रंग पीला, भूरा और स्वाद तथा गन्ध मधुर होते हैं। ज्यादातर यह खाने और जलाने के काम आता है। इसका साबुन भी बन सकता है और वह तिल के तेल से बने हुए साबुन जैसा होता है। तेल की खासियतें निम्न हैं:–

ली कि घोल में अन्दाजन ८ या १० प्रतिशत सोडा कारबोनेट हो जाय। मामूली

१५° सेन्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९२६०
साबुन-क्रिया का मूल्य	१९०
आयोडिन वैल्यू	१३०
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	१ प्रतिशत

४. खसखस का तेल—इसके पौधे का लैटिन नाम पापावर सोम्नीफ़ेरम है। खसखस की भारत में मिठाइयाँ भी बनती हैं। इस देश में इसकी खेती ज्यादातर अफ़ीम निकालने के लिए की जाती है। खसखस के दानों में लगभग ४५ प्रतिशत तेल होता है। उसका रंग हलका पीला होता है और वह हवा में सूख जाता है। इस कारण यह चित्रकारों के रंग, वारनिश आदि बनाने के काम की वस्तु है। ज्यादातर यह खाने के काम आता है। साबुन बनाने में इसके गुण कुसुम्भी के तेल से मिलते-जुलते हैं। इसकी विशेषताएं ये हैं:—

१५° डिग्री सैन्टीग्रेड पर विशिष्ट गुरुत्व	०.९२४
साबुन-क्रिया का मूल्य	१९०—१९७
आयोडिन वैल्यू	१२०—१४३
साबुन-क्रिया में न लगने वाला भाग	०.५ प्रतिशत

बरोजा—तारपीन का तेल निकालने के लिये जब चीड़ के गोंद को भबके में डालकर अर्क खींचा जाता है तब बरोजा भी बन जाता है। यह पेड़ हिमालय, पंजाब, संयुक्तप्रान्त, शिवालिक पहाड़ियों और भूटान आदि के जंगलों में बहुत होता है। पेड़ों से गोंद लेने के लिए ज़मीन से २-३ फीट ऊंचाई पर उनके तनों में लगभग २ इंच लम्बी काटें कर दी जाती हैं और काट के निचले भाग में टीन की एक तूती लगा देते हैं जिसमें से चू-चू कर गोंद नीचे ज़मीन पर रखे बरतन में एकत्र होता रहता है। कुछ महीनों बाद नयी-नयी काटें करते रहते हैं। इस गोंद का भबकों में अरक़ खींचा जाता है। जो अर्क ऊपर उड़के आता है वह तो तारपीन तेल होता है और बचे हुए भाग का दुबारा अर्क खींचने से बरोजा बनता है। शुद्धता और रंग के अनुसार बरोजा कई प्रकार का होता है। जैसे डब्ल्यू. डब्ल्यू. (W. W. Water White) पानी-सा सफ़ेद, डब्ल्यू.

जी. (W. G. Window Glass) खिड़की के काँच के रंग का, और एन० सी० (Normal) साधारण आदि। बरोजा गिरकर टूट जाता है और पारदर्शक होता है।

तारपीन का तेल, दवाइयाँ और वारनिशें बनाने के काम आता है। बरोजा भी वारनिशें, मुहर की लाख, साबुन तथा अन्य अनेक वस्तुएं बनाने में काम आता है। बरोजे का साबुन इतना नरम होता है कि वह अकेला काम नहीं दे सकता। इस कारण उसे अन्य तेलों और चिकनाइयों में मिला दिया जाता है। साबुन जितना नरम या सख्त बनाना हो उसके अनुसार तेलों में इसकी मिलावट ५ से २० प्रतिशत तक की जाती है। बरोजा मिलाने से साबुन का झाग और मैल काटने की ताक़त बढने के साथ-साथ उसकी बनावट भी सुधर जाती है। इससे तेलों की बुरी बू भी दब जाती है। बरोजा मिला साबुन कुछ समय बाद बेरंग हो जाता है, इस कारण इसे नहाने के साबुन में नहीं मिलाते। बरोजा का साबुन कागज़ को सख्त करने के काम आता है। रासायनिक दृष्टि से बरोजा तेजाबी होता है और इस कारण सोडिअम कारबोनेट से मिलकर आप ही साबुन बना देता है। ऐसा होते समय खूब बुलबुले उठते हैं। इसलिये जब बरोजा से साबुन बनाना हो तो यह एहतियात रखनी चाहिए कि साबुन का मसाला उबलकर बरतन के बाहर न आजाय। बरोजा से साबुन चाहे सोडियम कारबोनेट के साथ बनाओ चाहे कॉस्टिक सोडा के साथ, ग्लिसरीन पैदा नहीं होती।

ग. तेल साफ़ करना

घानी में पेरकर या बीजों को पीसकर और पानी में उबालकर जो तेल निकलते हैं उनमेंसे बहुतों में बीजों के झिल्लीदार मैल रह जाते हैं। इन मैलों के कारण साबुनों का रंग उड़ जाता है। यह शिकायत ठंडे, गरम और अध-गरम तरीक़ों से बनाये हुए साबुनों में प्राय: रहती है, बशर्तेकि उन्हें नमक द्वारा दानेदार बनाकर शुद्ध न किया गया हो। इसलिये साबुन बनाने से पहले तेलों को साफ़ कर देना उचित है। इसके लिये तेलों को १० प्रतिशत नमक के साथ उबाला जाता है। इससे झिल्लीदार मैल जमकर इकट्ठा हो जाता है और या तो तले में बैठ जाता और या तैर कर सतह पर जमा हो जाता है। ऊपर के मैल को किसी

तिनके आदि से अलग कर देते हैं, और यदि नीचे बैठा हो तो कुछ समय बाद शुद्ध तेल नितार लेते हैं, यदि मैल बहुत हो या तेल को बहुत हलके रंग का बनाना हो तो थोड़ा-सा सोडिअम कारबोनेट या कॉस्टिक सोडा (तेल के वज़न का आधा से १ प्रतिशत तक) भी नमक के साथ इस्तैमाल किया जाता है। इन चीज़ों का प्रयोग करने पर मैल तो सतह पर से अलग कर दिया जाता है, और नमक का पानी तथा अन्य मैल, नीचे बैठ जाने पर, तेल को नितारकर अलग कर दिये जाते हैं। इस शुद्ध तेल को भी दो एक बार शुद्ध ख़ालिस पानी या नमकीन पानी में धोया जाता है। इस तरह प्राप्त किये हुए तेल में बिल्कुल कोई मैल नहीं होता और उसका रंग हलका पीला चमकीला होता है। फलतः उसके साबुन का रंग भी सुन्दर चमकदार होता है।

घ. खार

साबुन बनाने के काम में चार खार आते हैं—कॉस्टिक सोडा, कॉस्टिक पोटॅश, सोडिअम कारबोनेट और पोटॅशियम कारबोनेट। पिछले दोनों हलके और पहले दोनों तेज़ खार हैं।

हलके खार—सोडिअम कारबोनेट और पोटॅशियम कारबोनेट हलके खार इस कारण कहलाते हैं कि ये मनुष्य की खाल को काटते नहीं और इनको बआसानी छुआ जा सकता है। इनसे हलदी का रंग लाल पड़ जाता है। साबुन बनाने के लिये ये तेलों के साथ स्वयं नहीं मिलते। परन्तु ये हाइड्रोक्लोरिक ऐसिड (नमक का तेज़ाब), सल्फ्यूरिक ऐसिड (गन्धक का तेज़ाब,) नीबू का रस आदि तेज़ाबों के साथ मिलकर लवण बनाते हैं, और जब ऐसा होता है तब खूब बुलबुले उठते हैं। इस प्रकार तेजाबों से मिलने के बाद उनका खार-पन जाता रहता है। ये बरोजा तथा अन्य चिकने तेजाबों के साथ भी बहुत उफान के साथ मिल जाते हैं और इनका साबुन बन जाता है। जब हलके खारों और बरोजा तथा अन्य चिकनाई वाले तेजाबों का साबुन बनाया जाय तब इस उफान के कारण यह एहतियात रखनी पड़ती है कि मसाला उफनकर बरतन से बाहर न निकल जाय। इनको बुझे हुए चूने के साथ मिलाने से तेज़ खार बन जाता है।

रंगने, रंग उड़ाने (ब्लीचिंग,) कांच बनाने और अन्य अनेक उद्योग-धन्धों में ये खार काम आते हैं।

पोटैशियम कारबोनेट पसीजक है, यानी हवा में से नमी लेकर भीग जाता है। सोडिअम कारबोनेट पसीजता नहीं, बल्कि धोबी-सोडा के स्फटिक पानी छोड़ देते और चूरा हो जाते हैं। इसी कारण यह लवण अंग्रेजी में 'एफ्लोरसेण्ट' अर्थात चूरा हो जाने वाला कहलाता है। ये दोनों खार कुछ-कुछ मैल साफ़ कर देते हैं। इसलिए धोने के साबुन में इनकी मिलावट की जाती है। जिन साबुनों में पोटैशिअम कारबोनेट मिलाया जाता है, वे नरम हो जाते हैं। परन्तु यह लवण बहुत महंगा पड़ने के कारण कभी-कभी ही इस काम के लिए प्रयुक्त होता है। इसके विपरीत यदि नरम साबुन में सोडिअम कारबोनेट मिला दिया जाय तो वह सख्त हो जाता है और कम घिसता है। ऐसा साबुन पसीजता भी नहीं। यह दोनों लवण कहां मिलते हैं, और कैसे बनाये जाते हैं, इसका बयान आगे किया जाएगा।

तेज़ खार—कॉस्टिक सोडा और कॉस्टिक पोटैश अपने तेज असर के कारण तेज़ खार कहलाते हैं। उन्हें हलके खारों पर चूने की क्रिया करके बनाया जाता है। यदि उन्हें हाथ पर अथवा अन्य किसी अङ्ग पर रखा जाय तो वे खाल को काट देते हैं, वहां छाले पड़ जाते हैं और खाल खायी जाती है। हलके खारों की भाँति ये तेजाबों से मिल जाते और उस तेजाब का लवण बना देते हैं, परन्तु यह क्रिया होते समय बुलबुले नहीं उठते और न उफान आता है। तेलों के साथ मिलकर ये साबुन बनाते हैं और ग्लिसरीन को अलग कर देते हैं। इनसे हलदी का रंग लाल पड़ जाता है। ये भी रंगने, रंग उड़ाने (ब्लीचिंग) और अन्य व्यवसायों में बहुत काम आते हैं। ये दोनों ही खार हवा में खुले रख देने पर नमी चूसकर द्रव हो जाते हैं। कॉस्टिक पोटैश का साबुन नरम और कास्टिक सोडा का सख्त बनता है। पहले का असर दूसरे से तेज़ होता है, परन्तु वह महँगा पड़ने के कारण बहुत कम बरता जाता है।

च. कास्टिक सोडा

कॉस्टिक सोडा बिजली से नमक को फाड़कर बनाया जाता है। इसे बनाते हुए क्लोरीन गैस और ब्लीचिंग पाउडर (रंग

उड़ाने का पाउडर) भी बन जाते हैं। धोबी सोडा (सोडा अथवा सोडियम कारबोनेट) के साथ बुझे हुए चूने की आवश्यक मात्रा मिलाकर भी यह बन सकता है। सोडा ऐश अथवा सोडिअम कारबोनेट प्राकृतिक अवस्था में निम्न वस्तुओं से प्राप्त होता है:—

१. सज्जी खार, यानी खारीलानी नामक कुछ पौधों की राख से।
२. पापड़खार से, जो कि खारी झीलों का पानी उड़ाकर बनाया जाता है।
३. सज्जी मिट्टी से जो कि ऊसर या रेह की ज़मीन में होती है।

ये तीनों ही वस्तुयें भारत में प्रचुर मात्रा में मिलती हैं।

(१) सज्जी खार—खारीलानी जाति के पौधों की राख सज्जी खार कहलाती है। जबतक (१५० वर्ष पहले) लिबैंक ने खाने का मामूली नमक बिजली से फाड़कर सोडिअम कारबोनेट बनाने का तरीका नहीं निकाला था तबतक यूरोप में भी सज्जी खार बनाने का व्यवसाय खासा बड़ा था। बल्कि तबतक पूर्व और पश्चिम दोनों जगह सोडा प्राप्त करने का मुख्य ज़रिया यही था। भारतवर्ष में अनेक पौधे ऐसे होते हैं, जिनसे सज्जी खार बनाया जा सकता है। रॉक्सबर्ग आदि पुराने लेखकों ने बहुत पहले इन कुदरती खज़ानों से फायदा उठाने की तरफ़ इङ्गलैण्ड के लोगों का ध्यान खींचा था। उनकी राय थी कि भारतवर्ष के पूर्वी तथा पश्चिमी तटों पर कुछ खारीलानी पौधे इतने अधिक उगते हैं कि उनसे दुनिया-भर के साबुन और कांच के व्यवसायों की सोडा ऐश की जरूरत पूरी की जा सकती है। और सम्भवतः तब था भी ऐसा ही। सज्जी खार बनाने का व्यवसाय ज्यादा-तर पंजाब और सिन्ध में प्रचलित है। खारीलानी पौधे बरसात के अन्त में जमा करके सुखा लिये जाते हैं। फिर उनको एक आधे-गोल गढ़े में जलाते हैं और उस गढ़े की तली में मिट्टी के छोटे-छोटे घड़े उलटाकर (मुँह नीचे तली ऊपर) रख दिये जाते हैं तथा उनकी तलियों में सुराख कर देते हैं। राख में जो खार होता है वह आग की गरमी से पिघल कर इन घड़ों की तलियों के सुराखों में से घड़ों में चला जाता है और घड़े की तली में जमा हो जाता है। बाकी राख को कई बार उलटते पलटते रहते हैं, ताकि अनजले लकड़ी, पत्ते आदि जल जायँ। बाद को गढ़ा ढक दिया जाता है

ताकि उसके अन्दर पानी या नमी न पहुँचे और राख ठण्डी हो जाय। घड़ों के नीचे जमा हुआ सज्जी खार बढ़िया होता है और लोटा-खार कहलाता है, तथा बची हुई राख घटिया सज्जी खार होती है। पहले पञ्जाब और सिन्ध में हर साल हजारों मन सज्जी खार बनाया जाता था, परन्तु अब विदेशों से सस्ता धोबी सोडा आने के कारण यह धन्धा लगभग डूब गया है। घटिया बढ़िया किस्म के अनुसार सज्जी खार में लगभग २५ प्रतिशत शुद्ध सोडिअम कार्बोनेट होता है। जिन पौधों से सज्जी खार बनता है, उनमें से मुख्य ये हैं:—

१. एन्थ्रोहृकनेमम इण्डिकम या सैलिकोरानिया इन्डिका (बंगाली जादुपालंग; गुजराती व मराठी—मचोला, झूरी, चील; तामिल-उमरी; तिलगु—कोयापिप्पली ।) यह पौधा बंगाल, बम्बई और मद्रास के समुद्र-तटों पर बहुतायत से पाया जाता है।

२. हैलोक्सिलोन रिकरवम— यह पश्चिमी तथा मध्य पंजाब और नमक की पहाड़ियों में बहुत होता है। यह दक्षिण में भी मिलता है। इसका स्थानीय नाम खार या खारीलानी है। इस झाड़ी का सज्जी खार बहुत बढ़िया बनता है।

३. सालसोला फोटिडा—पंजाब में पेशावर की घाटी से दक्षिण पश्चिम की तरफ़ को होता है। इसका नाम लानी या शोरा लवण है। इसे ऊंटों को बहुत खिलाते हैं।

(२) पापड़खार—खार की प्राप्ति का दूसरा ज़रिया खारी झीलें हैं—जैसे कि बरार की लोनार झील और सिन्ध के ढांड आदि। ये झीलें नीची ज़मीनों में होती हैं। ज़मीन के नीचे की मिट्टी में जो लवण बनते हैं वे पानी के साथ बहकर इन नीची ज़मीनों में आ जाते हैं और ये खारी झीलें बन जाती हैं। लोनार झील व सिन्ध के ढांडों से बहुत भारी तादाद में खार निकल सकता है। सिन्ध का थोणा और बरार का डल्ला लगभग शुद्ध सोडिअम कार्बोनेट के उदाहरण हैं। चुनीहो (सिन्ध) और खुप्पल (बरार) अशुद्ध खार हैं, जिनमें सोडिअम कार्बोनेट के सिवा ग्लौबर लवण, खाने का मामूली नमक, रेत, मिट्टी आदि भी मिले रहते हैं। इन झीलों का पानी उड़ाकर बनाये हुए खार में ५०

से ९० प्रतिशत तक सोडियम कारवोनेट होता है बाज़ार में यह पापड़खार के नाम से विकता है। लोनार झील पर सोडियम कारवोनेट प्रायः शुद्ध रूप में तैयार किया जाता है।

(३) सज्जी मिट्टी—वरसात के तुरन्त वाद बहुत-सी ज़मीनों पर जो सफ़ेद सफ़ेद पाउडर-सा जम जाता है, वही सज्जी मिट्टी होती है। इन ज़मीनों को रेह या ऊसर करते हैं। इस सज्जी मिट्टी में सोडिअम कारवोनेट, सोडिअम सलफ़ेट या ग्लौबर का लवण, खाने का नमक आदि अनेक लवण मिट्टी तथा रेत के साथ मिले रहते हैं। कुछ ऊसर ज़मीनों में सोराखार या पोटैशिअम नाइट्रेट जमता है। एक ही ज़मनि की सज्जी मिट्टी में विविध लवणों का अनुपात अलग-अलग होता है। सोडिअम कारवोनेट इन मिट्टियों में ० से २० प्रतिशत तक होता है। यह पाले-सी जमी हुई सफ़ेद वस्तु अथवा सज्जी मिट्टी खेती की दृष्टि से बड़ी नुक़सानदेह है, क्योंकि यह उपजाऊ ज़मीन को भी ऊसर बना देती है। एक वैज्ञानिक का मत यह है कि ऊसर ज़मीनों में जो घुलने वाले लवण पाये जाते हैं वे मिट्टी, कंकर, पत्थर आदि (सिलिकेटों) पर हवा, नमी, गरमी, कारवोनिक ऐसिड आदि के असर से बनते हैं। दूसरा मत यह है कि भूमि में ये तबदीलियां सूक्ष्म कीड़ों (बैक्टीरिया) के कारण होती रहती हैं। वरसात के पानी में घुलकर ये लवण ज़मीन की सतह के नीचे चले जाते हैं, और यदि सतह के नीचे पानी के वहाव का रास्ता ठीक न हो तो ये वहीं रुक जाते हैं और वरसात के अन्त में ज़मीन के सूक्ष्म छेदों में से ऊपर आ जाते हैं तथा इनका पानी धूप से उड़ जाने के बाद ये लवण छोटे- छोटे फूलों के रूप में वहीं जमे रह जाते हैं। हलका ठीक न चलना, ज़मीन की सतह के नीचे पानी का वहाव ठीक न होना, वार-वार ठण्डी और गरम हवाओं का चलना आदि भी, ज़मीन पर ये लवण जम जाने के कारण हैं।

कॉस्टिक बनाने की विधि—कॉस्टिक सोडा (संस्कृत नाम क्षार) धोबी सोडा अर्थात् सोडिअम कारवोनेट के साथ बुझा या अनबुझा चूना मिलाकर बनाया जाता है। अनबुझे चूने पर गरम पानी डालने से बुझा हुआ चूना बन जाता है, जैसाकि पानों के लिए चूना बनाते हुए किया जाता है। हिसाव यह

है कि १०६ भाग सोडिअम कारबोनेट के लिये शत प्रतिशत शुद्ध ५६ भाग अनबुझे चूने की जरूरत पड़ती है, जोकि पानी से मिलकर बुझा चूना बन जाता है। इनमें जो रासायनिक परिवर्तन होता है, उसका हिसाब यह रहता है:—

५६ भाग अनबुझा चूना और १८ भाग पानी मिलकर ७४ भाग बुझा चूना बनता है। १०६ भाग धोबी-सोडा और ७४ भाग बुझा चूना मिलाकर ८० भाग कॉस्टिक सोडा और १०० भाग कच्चा चूना (चूने का कारबोनेट) बनता है।

इस प्रकार जो कॉस्टिक सोडा बनता है वह पानी में घुल सकता है। कच्चा चूना नहीं घुल सकता, अतः यह घोल की तली में बैठ जाता है। यों अमल में, सोडा राख (धोबी सोडा) को उससे १२ गुणा वज़न के पानी में घोलकर उसमें पहले से पीसा हुआ अनबुझा चूना काफ़ी मात्रा में डाला जाता है। इन सबको भलीभांति उबालकर अलग रख देते हैं, ताकि कच्चा चूना बरतन की तली में बैठ जाय। ऊपर जो साफ द्रव रहता है उसीमें कॉस्टिक सोडा घुला होता है। इस घोल का पानी आंचपर रखकर उड़ा दिया जाता है, ताकि वह घोल ३६ * बोमी डिग्री का रह जाय।

ऊपर जिन खारों का जिक्र किया गया है उन सबकी रचना बिलकुल एक-सी न होने के कारण उनसे कॉस्टिक सोडा बनाने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। और इसी कारण इस विषय में कोई निश्चित नियम नहीं बतलाये जा सकते। उचित यह है कि किसी खार से कॉस्टिक सोडा बनाने से पहले यह जान लिया जाय कि उसमें शुद्ध सोडियम कारबोनेट का प्रमाण क्या है! खार की भाँति ही, बाजार में बुझे चूने के नाम से जो चूना बिकता है उसमें शुद्ध बुझे चूने का अनुपात सदा एक-सा नहीं रहता। इस कारण, यह जान लेना भी जरूरी होता है कि उसमें शुद्ध चूने का अनुपात क्या है।

---

* बोमी डिग्री शब्द का प्रयोग आगे भी बार २ आवेगा। इसका अभिप्राय पहले एक टिप्पणी में समझाया जा चुका है। अंग्रेजी में ३६ बोमी डिग्री को 36°Bé लिखा जाता है।

जब यह अनुपात जानना सम्भव न हो तब निम्न क्रिया की जा सकती है :-

कारबोनेट (अशुद्ध खार) के उबलते हुए घोल में थोड़ा अनबुझा चूना डालकर उसे कुछ देर तक हिलाओ, ताकि उसमें कॉस्टिक बनने की क्रिया पूरी हो जाय। अब घोल को बिना हिलाये कुछ देर बैठ जाने दो। इसके बाद मिट्टी या कांच का एक छोटा-सा बरतन लेकर उसमें, ऊपर-ऊपर से थोड़ा सा साफ़ घोल निकाल लो। ध्यान रखो कि नीचे बैठे हुए तलछट के कण उसमें न आने पावें। मिट्टी या कांच के छोटे बरतन में परीक्षा के लिये जो थोड़ा घोल निकाला है अब उसमें नीबू का रस, नमक का तेज़ाब या और किसी खटाई का पानी काफ़ी मात्रा में डालो। यदि उसमें ऐसे बुलबुले उठें जैसे कि सोडा वाटर की बोतल में उठा करते हैं तो इसका मतलब यह है कि खार के घोल में अनबुझा चूना थोड़ा डाला गया था। कुछ चूना उसमें और डालो और फिर इस क्रिया को दोहराओ। जबतक तेजाबी पानी से बुलबुलों का उठना बन्द न हो तब तक यह क्रिया दोहराते चले जाओ। परीक्षा के लिये लिये हुये साफ घोल में तेजाबी पानी काफ़ी पड़ा है या नहीं, यह जानने के लिए उसकी दो एक बूंद हल्दी के पानी में डालकर देखो। यदि हल्दी का पीला रंग लाल हो जाय तो तेजाबी पानी थोड़ा पड़ा समझो, और ज्यादा तेजाबी पानी डाल कर फिर हल्दी की परख करो, यहांतक कि हल्दी का रंग बदलना बंद हो जाय। हल्दी का रंग न बदलने का मतलब यह है कि खार के घोलमें इतना तेजाब पड़ चुका है कि वह खारी नहीं रहा।

इस परख की जड़ में उसूल यह है कि खार के घोल से हल्दी या उसका पानी लाल हो जाता है, परन्तु तेजाब से नहीं। खार के घोल में तेजाब या तेजाबी पानी मिलाने का प्रयोजन यह है कि ये दोनों चीजें आवश्यक मात्रा में मिलने पर एक दूसरे का असर खो देती हैं। सोडिअम कारबोनेट पर कोई तेजाब डालने से एक गैस निकलता है। सोडा वाटर सरीखे बुलबुले उस गैस के ही होते हैं। अनबुझा चूना डालकर, हिलाकर तलछट बैठ लेने के बाद, ऊपर से नितारे हुए साफ़ घोल में, तेजाबी पानी अधिक मात्रा में डालने का प्रयोजन यह है कि उस घोल में सोडा कॉस्टिक तथा सोडा कारबोनेट दोनों चीजें मिली रहती हैं। तेजाब का असर पहले सोडा कॉस्टिक पर होता है और

जब तेज़ाब सब कॉस्टिक को उदासीन कर चुकता है तब वह सोडा कारबोनेट पर अपना असर करता है। कॉस्टिक पर तेजाब के असर से बुलबुले नहीं उठते; कारबोनेट पर उठते हैं। इस तरह यह पता लग जाता है कि सारा कारबोनेट कॉस्टिक बन गया या कुछ बाकी भी रह गया।

विभिन्न ज़रियों से प्राप्त सोडिअम कारबोनेट का कॉस्टिक बनाना—सज्जी खार और पापड़ खार से कॉस्टिक सोडा बनाना उतने झंझट का काम नहीं जितना सज्जी मिट्टी से; क्योंकि उसमें पहले बहुत-सी मिट्टी से पानी में घुलने वाले लवणों को अलग करने के लिए अनेक झंझट भरी क्रियाएं करनी पड़ती हैं। इस कारण कॉस्टिक बनाने की विधि को दो भागों में बाँटना पड़ेगा, (१) सज्जी खार तथा पापड़ खार से और (२) सज्जी मिट्टी से।

१—सज्जी खार और पापड़ खार से कॉस्टिक बनाना

आवश्यक उपकरण (औज़ार) लोहे या सीमेण्ट की उपयुक्त टंकियां, लोहे के ढोल या किरासीन तेल के खाली मुंह-खुले पीपे, हिलाने के लिए लकड़ी का मुसद्द या लोहे की बड़ी कड़छी, अंगीठी, बड़ी कड़ाही जैसी में कि हलवाई पूड़ी आदि तलते हैं, बोमी का हाइड्रोमीटर (घोल का पतलापन या गाढ़ापन नापने का यंत्र), एक ऐसा बरतन जिसमें हाइड्रोमीटर डालकर देखा जा सके, और बालटियां आदि। बरतनों के छोटे-बड़े होने के विषय में एक बार ही निश्चित कुछ नहीं लिखा जा सकता, क्योंकि यह सब कम ज्यादा आवश्यकता के अनुसार होगा।

केमिकल (अर्थात् मसाले)—भट्टी में से ताज़ा निकाला हुआ अच्छा अनबुझा चूना या ऐसा चूना जो हवा के असर से बचाकर रखा गया हो, हल्दी का पानी, नमक का तेजाब या नीबू का रस या और किसी तेज़ खटाई का पानी परखने के लिए।

विधि—सज्जी खार या पापड़ खार को उबलते हुए पानी में घोलो। देख लो कि घोल में अन्दाजन ८ या १० प्रतिशत सोडा कारबोनेट हो जाय। मामूली

तौर पर सज्जी खार के १ भाग में ३ भाग पानी और पापड़ खार के १ भाग में ६ से ८ भाग तक पानी डालना पड़ता है। घोल ऐसा बनाओ कि तैयार हो जाने पर हाइड्रोमीटर में उसका नाप १३ से १६ तक बोमी डिग्री हो। ऐसे साफ पापड खार या सोडा ॲश का, जिसमें सोडिअम कारबोनेट ९० प्रतिशत से भी अधिक हो, घोल १३ या १४ बोमी डिग्री तक काफ़ी हो जाता है। किसी भी सूरत में घोल इससे ज्यादा गाढ़ा नहीं करना चाहिए। अब घोल को अच्छी तरह उबालकर कॉस्टिक बनाने की टङ्की में डाल दो, जोकि लोहे या सीमेन्ट की अपनी जरूरत के अनुसार छोटी-बड़ी बनाई गई हो; थोड़ा काम तेल के खाली पीपों से भी हो सकता है।

चित्र संख्या १ की आकृति १ में A, B, C, और D. चार टङ्कियां हैं, जो आवश्यकतानुसार छोटी-बड़ी बनवायी जा सकती हैं। v1, v2, और v3, तीन टोंटियाँ हैं जो इस प्रकार लगाई गई हैं कि उन तीनों के नीचे, एक दूसरे के साथ बिना टकराये, बालटियां रखी जा सकती हैं। इन टोंटियों को इस प्रकार लगाने का प्रयोजन यह है कि टङ्की की विभिन्न सतहों पर से द्रव लिया जा सके। अनुभव से कॉस्टिक सोडा के घोल का ऐसा परिमाण मालूम हो जायगा कि सोडा कारबोनेट तथा चूने की आपसी क्रिया से बने हुए विविध द्रवों की सतहें एक-एक टोंटी तक रहें। यह अन्दाज़ हो जाने पर साफ़ घोल बिल्कुल भी बरबाद नहीं होगा। कई टंकियाँ बनाने का प्रयोजन यह है कि विविध सतहों पर लिया हुआ द्रव उनमें एकत्र किया जा सके और बाद को उसमें और खार मिलाया जा सके। यदि कॉस्टिक-क्रिया लोहे की टंकियों में की जाय तो उनमें भी ऊपर दिखाये अनुसार तीन टोंटियां लगवाई जा सकती हैं। जैसाकि ऊपर लिखा गया है, टंकियां आवश्यकतानुसार छोटी या बड़ी बनवाई जा सकती हैं। ऊपर बतलाये अनुसार १३ से १६ बोमी डिग्री तक का खार-घोल बनाकर, उबालकर, इन हौजों में उलट दिया जाता है। जब एक तरफ़ यह काम हो रहा हो तभी दूसरी तरफ अनबुझे चूने को गरम पानी में बुझाया जाता है और इस गुंधे हुए चूने की आवश्यक मात्रा, एक जाली में से, खार के गरम घोल में छोड़ दी जाती है; और उसे कुछ देर तक खूब हिलाकर, बैठने के लिए छोड़ दिया जाता है। चूना

आवश्यक मात्रा में पड़ गया या नहीं इसका निश्चय, ऊपर बतलाये अनुसार, कॉस्टिक सोडा के साफ़ घोल को नीबू के अरक या अन्य किसी तेजाबी पानी से परखकर कर लेना चाहिए। चूना डालने के बाद साधारणतया पौन से एक घण्टे तक हिलाना और इसे ४ घण्टे तक बैठने देना चाहिए। इतने समय के पश्चात साफ़ घोल बिना किसी तलछट के, टोंटी में से निकाल देना चाहिए। इस साफ़ घोल को एक बारीक जाली में छानकर दूसरी हौज़ी में जमा कर देना और उसपर कुछ निशान लगा देना चाहिये। छाना इसलिए जाता है कि तिनका या मिट्टी आदि घोल में हो तो वह अलग हो जाय। हौज़ी का तलछट गीला होने के कारण उसमें भी कुछ-न-कुछ खार रह ही जाता है। उसे निकालने के लिए तलछट को गरम पानी में डालकर खूब हिलाते और बैठ जाने पर पहले बतलाये अनुसार साफ़ घोल नितार लेते हैं। इस घोल को पहले साफ़ घोल में मिलाते नहीं, तीसरी हौज़ी में जमा कर देते हैं। तलछट को गरम पानी के साथ इसी तरह दो तीन बार नितारा जाता है और नितार को दूसरे घोल अर्थात् नितार में ही मिला दिया जाता है। बाद को इस नितार में और ताज़ा खार मिला देते हैं। यदि नितार में खार पर्याप्त मात्रा में हो—उसका गाढ़ापन ६ बोमी डिग्री या उससे ऊंचा हो—तो उसे प्रथम बार के घोल में ही मिला सकते हैं। हाँ, उसके बाद के हलके घोलों को अलग ही रखना और नया खार मिलाने के काममें लाना चाहिए। प्रथम बार के घोल का गाढ़ापन दस बोमी डिग्री तक हो सकता है। इस घोल को एक उथले बरतन में गरम करके पानी उड़ा दिया जाता है, यहांतक कि वह ३६ से ३८ बोमी डिग्री का रह जाता है, और यह ठण्डी या गरम विधि से साबुन बनाने के काम आता है।

२. सज्जी मिट्टी से कॉस्टिक सोडा बनाना

सज्जी मिट्टी या रेह से कॉस्टिक बनाना कठिन काम है, क्योंकि इसमें सोडिअम कारबोनेट का अनुपात नीचा होता है। विभिन्न स्थानों से ली हुई मिट्टी में ५ से २० प्रतिशत तक सोडिअम कारबोनेट पाया जाता है। उपकरण (औज़ार) वैसे ही चाहिऐ जैसे ऊपर बतलाये गये हैं।

विधि—इंधन की बचत करने के लिए अच्छा यह है कि नितारने के 'बैटरी सिस्टम' अर्थात् एक के बाद दूसरे नमूने से नितारने की श्रृंखला का उपयोग किया जाय। अब इसीका वर्णन करते हैं।

A. B, C. D. आदि कई हौजियां हैं, जिनमें पहली या दूसरी टोंटी तक सज्जी मिट्टी भर दी जाती है। (देखो चित्र सं० १ की आकृति सं० १)। A हौज़ी में इतना गरम पानी भरा जाता है कि मिट्टी की सतह के ऊपर उसकी गहराई इतनी होजाय जितनी हौज़ी की तली से मिट्टी की है। अब खूब हिलाकर मिट्टी इस पानी में घोल दी जाती है और उसे बैठने दिया जाता है। इसके बाद मिट्टी के ऊपर की टोंटी से घोल को बाहर निकाल लिया जाता है। इसे घोल नं० 1A कहते हैं। इसे B हौज़ी की मिट्टी में मिलाकर खूब हिलाते, बैठने देते और पूर्वोक्त प्रकार टोंटी से नितार लेते हैं। A हौजी की मिट्टी में फिर नया गरम पानी डाल्कर उसी प्रकार हिलाकर, बैठने देकर, मिट्टी के ऊपर की टोंटी से निकाल लेते हैं। यह घोल नं० २A हो गया। इसको घोल नं० १A और B हौज़ी की मिट्टी में मिलाकर वही क्रिया दोहरायी जाती है। इस क्रिया के साथ ही A हौज़ी की मिट्टी में तीसरी बार नया गरम पानी डालकर, पूर्वोक्त विधी अनुसार घोल नं० ३A तैयार किया जाता है। B हौज़ी में से घोल नं० १B निकाल्ने के बाद, उसमें घोल नं० ३A डालकर, हिलाने, बैठ जाने देने और नितार लेने की क्रिया की जाती है। घोल नं० १B को C हौज़ी में नयी मिट्टी के साथ मिलाकर इस क्रिया को दुहराया जाता है। यह घोल नं० १C कहलाता है। इसी प्रकार नितारने की क्रिया का सिलसिला (श्रृंखला) बन्ध जाता है। एक हौज़ी में एक बार डाली हुई मिट्टी को ३ या ४ बार धोया जाता है, यहाँतक कि उसमें ऐसा कोई लवण बाक़ी नहीं रह जाता जो पानी में घुल सकता हो। और इन घोलों को अगली हौजी में हर बार नयी मिट्टी के साथ मिलाकर क्रिया की जाती है। यदि कभी यह दिखाई पड़े कि नितारा हुआ घोल अगली हौजी की मिट्टी में मिलाने के लिये काफ़ी नहीं है तो, उससे पहले की हौजी में से निकाला हुआ आखिरी घोल भी इसमें मिलाकर श्रृंखला जारी रखी जाती है। यह क्रिया तब तक जारी रखी जाती है जबतक कि १३ या १४ बोमी डिग्री का घोल प्राप्त न हो जाय। अच्छा यह है कि बीच-बीच में हाइ-

PLATE No 1
चित्र सं० १
V_3
V_2
V_1
A
B
C
D
FIG 1
आकृति सं० १
CAUSITCISING TANKS
कॉस्टिक बनाने की टंकियां
D
C
B
A
COCKS
FALSE BOTTOM
BAMBOO STRIPS
FIG 2
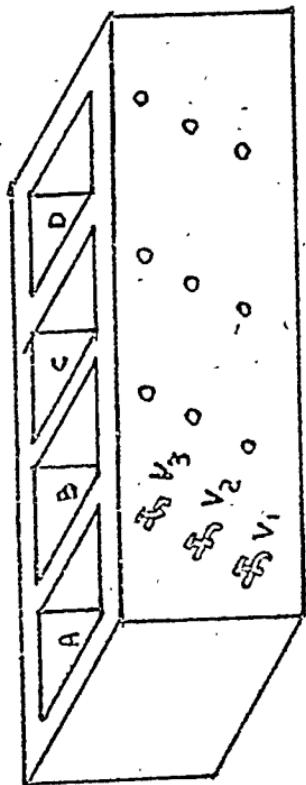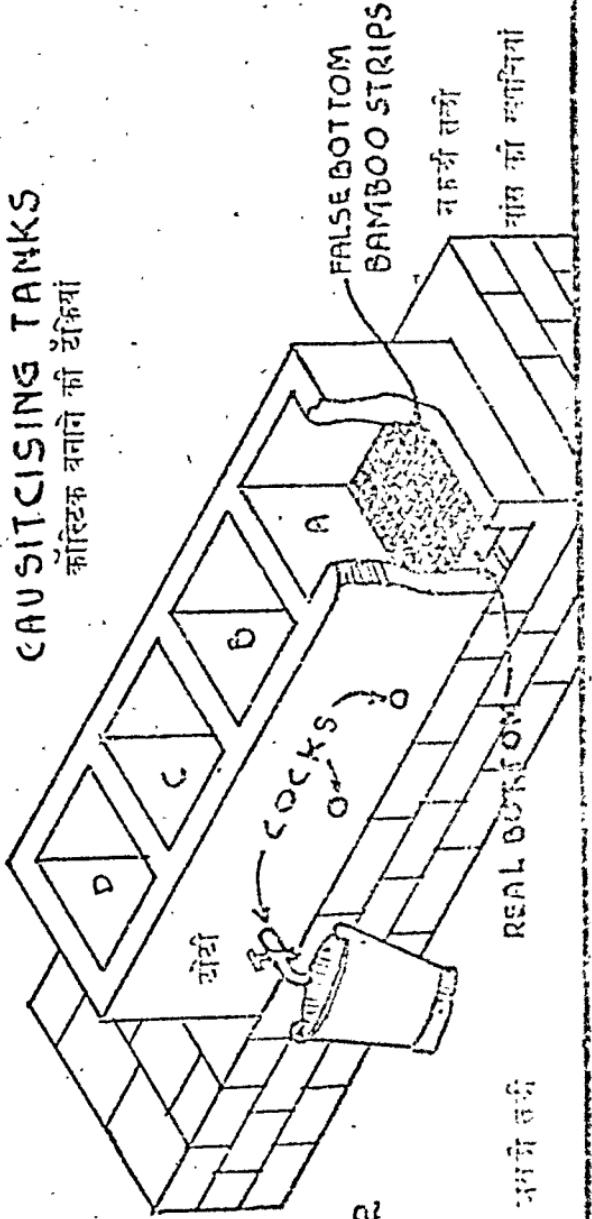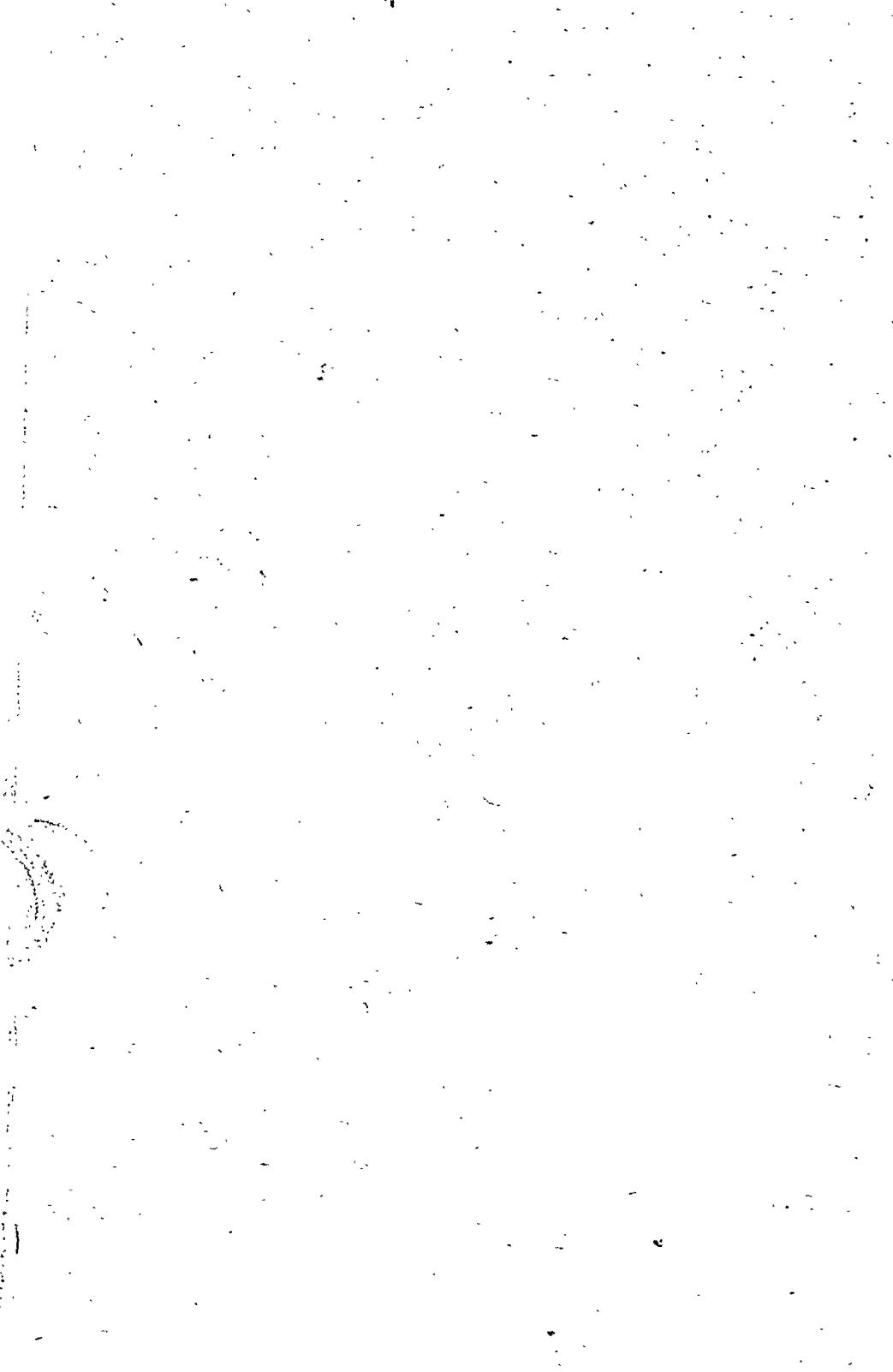
ड्रोमीटर द्वारा देखते रहें कि घोल कितना घना हो गया। अगली हौज़ी में क्रिया करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि मिट्टी पर जो पानी या पहली हौजी का नितार डाला जाय उसकी गहराई मिट्टी की गहराई से कम न हो। और जब मिट्टी को फोक समझ कर फैंका जाय तो उसमें से लवण यथाशक्ति पूरी तरह निकाले जा चुके हों।

सज्जी मिट्टी से लवणों की निकासी एक और ढंग से भी की जा सकती है। चित्र नं० १ की आकृति नं० २ में A. B. C. और D. आदि ऐसी हौजियाँ हैं जिनमें टोंटियाँ तलीसे कुछ ही ऊपर लगी हुई हैं। इन हौज़ियों की असली तली से लगभग ६ इन्च ऊपर, बांस की खपचियों या मज़बूत तार की जाली की एक नकली तली लगा दी जाती है। इस नकली तली को सन की बोरी या भूसी आदि से ढँक दिया जाता है। (टोंटी और नकली तली लगाने का ढंग समझने के लिए चित्र नं० १ की आकृति नं० २ देखो।) कई हौजियों में इस नकली तली के ऊपर थोडी थोड़ी सज्जी मिट्टी फैला दी जाती है। अब पहली हौजी में इतना गरम पानी डालते हैं कि वह उसमें डाली हुई मिट्टी का गारा बनाने के लिए काफ़ी हो। थोड़ी देर बाद यह पानी, उस मिट्टी के लवणों को अपने में घोलकर, नक़ली तली में से नीचे छन जाता है। इस घोल को टोंटी द्वारा बाहर निकाल कर अगली हौज़ी B. में पड़ी हुई मिट्टी पर डाल देते हैं और उसके लवण घुलाकर नीचे नितरने या टपकने देते हैं। इसी बीच पहली हौज़ी की मिट्टी पर दुबारा नया गरम पानी डालकर वही क्रिया दोहराई जाती है। B. हौजी में टपका हुआ लवण-मिला पानी टोंटी द्वारा निकाल कर अगली हौजी C. की मिट्टी पर डाला जाता है और उसके लवणों को घुलाकर टोंटी में से निकाल दिया जाता है।

यह विधि एक प्रकार से वही है जो पहले बयान की थी। भेद इतना ही है कि इसमें लवण का घोल तली की टोंटी में से निकाला जाता है और सज्जी मिट्टी को हिलाकर पानी में या पहली हौजी में से निकाले हुए घोल में नहीं घोला जाता, बल्कि स्वयं मिट्टी को नरम होकर लवणों को पानी में घुलकर, नीचे टपक जाने का अवसर दिया जाता है। हौज़ी में जो नकली तली लगायी

जाती है वह फिल्टर (छन्ने) का काम भी देती है और मिट्टी के छोटे कणों या तिनकों आदि को घोल में नहीं जाने देती।

यदि अपने पास सज्जी मिट्टी थोड़ी हो तो, ऊपर बयान की हुई विधियों के घपले में न पड़कर, उसे किसी टिन या अन्य बरतन में गरम पानी में भली-भाँति घोलकर बैठ जाने देना और ऊपर के घोल को एहतियात से नितार लेना चाहिए। टिन में नीचे बची हुई मिट्टी में नया गरम पानी डालकर यह क्रिया दोहरानी चाहिए। यह क्रिया तबतक दोहरानी चाहिये जबतक कि मिट्टी में से घुल सकने वाले सब लवण अलग न हो जायँ। इन सब नितारे हुए घोलों को मिलाकर आग पर पकाकर इतना गाढ़ा कर लिया जाता है कि १३ या १४ बोमी डिग्री का घोल रह जाय।

अपनी-अपनी खास ज़रूरत के अनुसार इन विधियों में आवश्यक परिवर्तन भी किया जा सकता है। उद्देश्य तो इतना ही है कि १३ या १४ बोमी डिग्री का घोल मिल जाय और घुल सकने वाला कोई लवण सज्जी मिट्टी में बाकी न रहे। इस प्रकार प्राप्त किए हुए घोलों को, संख्या (१) (खारों से कॉस्टिक बनाने के प्रकरण) में वर्णित विधिके अनुसार कॉस्टिक सोडा बनाया जा सकता है।

ऊपर बतलाये गये किसी भी ज़रिये से प्राप्त कॉस्टिक घोल बहुत हलका, ८ से १० बोमी डिग्री तक का, होता है; और उसमें कास्टिक सोडा के सिवाय भी कुछ लवण घुले रहते हैं। इस घोल का उपयोग अधउबला या दानेदार साबुन बनाने में या प्रारम्भिक अवस्थामें तेलों में थोड़ीसी साबुनक्रिया करने में किया जा सकता है। बाद को इन तेलों का पूरा साबुन बनाने के लिये गाढ़े कॉस्टिक घोल का उपयोग करना पड़ेगा। इसी कारण साधारणतया उत्तम मार्ग यही समझा जाता है कि कॉस्टिक घोलों का पानी उड़ाकर उन्हें २५ से ३० बोमी डिग्री तक गाढ़ा कर लिया जाय। यदि साबुन ठण्डी या गरम विधि से बनाना हो तो घोल को १४० डिग्री सेण्टीग्रेड या २८४ डिग्री फारनहाइट तक गरम करके ३६-३८ बोमी डिग्री तक गाढ़ा कर लेना चाहिए। जब घोल का

ताप-मान उक्त दरजे तक पहुँच जाय तब आग नीचेसे निकालकर, उसे ठण्डा होने का अवसर देना चाहिए और बैठ जाने पर ऊपर से नितार लेना चाहिए।

छ. धोबी सोडा—जैसाकि ऊपर बतला चुके हैं, सज्जी खार, पापड़ खार, और सज्जी मिट्टी से साफ करके बनाये हुए घोल का जब कॉस्टिक न बनाया जाय तब उससे शुद्ध सोडियम कार्बोनेट निकाला जा सकता है। इस हलके खार के घोल का पानी उड़ा कर उसे लगभग ३२ बोमी डिग्री का बना लेते हैं और उसे लोहे के उथले बरतनों में डालकर स्फटिक जमने देते हैं। यदि स्फटिक जल्दी बनाना हो तो घोल में टीन या लोहे के छोटे-छोटे टुकड़े लटका दिये जाते हैं। कुछ दिन बाद स्फटिक बन जाते हैं, जिनको बाकी घोल में से सुगमता से अलग किया जा सकता है। इस बचे हुए घोल में सोडिअम कार्बोनेट के सिवा भी कुछ लवण होते हैं। उक्त स्फटिक लगभग शुध्द सोडिअम कार्बोनेट होते हैं। हाँ, उनमें पानीका कुछ अंश अवश्य होता है। खुली हवा में रखने से उनका यह पानी और स्फटिकाकृति नष्ट होकर चूरा धोबी-सोडा बच रहता है। स्फटिक बनाने का काम शीतऋतु में बहुत अच्छा होता है।

ज. कॉस्टिक पोटॅश– (जवा खार, यवा खार या क्षार का नमक) कॉस्टिक पोटॅश लकड़ी की सफेद राख से निकलता है। जिन पौधों से अधिकतम पोटॅशियम कार्बोनेट वाली सफेद राख बनती है उनमें से कुछ ये हैं:–

१. Annual weeds (ऐनुअल पौधे) २. अघाडा, ३. अडूसा, ४. सालविन या सप्तपर्णी, ५. Amerantus spinosus (ऐमरेण्टस स्पिनोसस) ६. Antimesia species (ऐन्टीमिशिया क़िस्म के पौधे) ७. गन्नों के अगौले, ८. शीरा, ९. केला, १० Borassus Hobelliformis (बोरेसस होबेलीफारमिस) और कुछ अन्य पेड़। प्रथम ३–४ की राख में अन्यों की अपेक्षा अधिक पोटॅशिअम कार्बोनेट होता है। शीरे तथा गन्ने के अगौलों की राख में भी यह बहुत होता है। राख में पोटॅशिअम कार्बोनेट है या नहीं यह जानने की एक साधारण पहचान यह है कि यदि राख को पानी में भिगोकर हथेलियों में मला जाय तो साबुन-सा चिकना स्पर्श लगना चाहिए।

लकड़ी की राख से पोटॅश निकालने के लिए पहला काम, राख को पानी में घोलकर किसी कड़छी आदि से खूब चलाने का करना पड़ता है। फिर उसे बैठने देकर साफ़ घोल ऊपर से नितार लेते हैं। इस घोल को, दूसरे बरतन में फिर राख के साथ मिलाया जाता और बैठने देकर नितार लिया जाता है। इसी प्रकार तीसरे और चौथे बरतन में किया जाता है। पहले बरतन में बची हुई राख के साथ नये पानी से यही क्रिया की जाती है। यह सिलसिला तबतक दोहराया जाता है जबतक कि लगभग १० बोमी डिग्री का घोल नहीं मिल जाता। दूसरे शब्दों में, राख से पोटॅश उसी प्रकार निकाला जाता है जिस प्रकार सज्जी मिट्टीसे सोडा। पोटॅश के गाढ़े घोलको, पानी उड़ाकर, सुखा लेते हैं। ठण्डा करते हुए मिश्रण को बीच-बीच में हिलाते रहते हैं, ताकि डलियां न बन जायँ। यह कच्चा (अशुध्द) पोटॅश कारबोनेट कहलाता है। इस लवण में पोटॅशिअम और सोडिअम के अन्य लवण भी कम ज्यादा परिमाण में मिले रहते हैं।

कॉस्टिक पोटॅश बनाना हो तो राख से निकाले हुए गाढ़े घोल में बुझे चूने की लप्सी मिलायी जाती है और वही एहतियातें तथा परखें की जाती हैं, जिनका बयान कॉस्टिक सोडा बनाने की विधि में कर चुके हैं। कच्चे पोटॅश का घोल, पानी उड़ाकर ३५–३६ बोमी डिग्री तक गाढ़ा कर लिया जाता है और बन्द टीनों में रखा जाता है। बन्द रखने की ज़रूरत इस कारण होती है कि यह हवा में से पानी लेकर हलका पड़ जाता है।

झ. चूना—चूना मुख्यतया चूने के पत्थर, संगमरमर, कंकर, चाक, पोरबन्दर पत्थर और समुद्री जानवरों के घरों (शंख आदि) से निकलता है। पहली पांच चीज़ें ज़मीन में से निकलती हैं और अन्तिम को पानी के कीड़े बनाते हैं। इन चीज़ों के साथ कोयला मिलाकर उसे भट्टी में फूंकने से अनबुझा चूना तैयार हो जाता है। कच्चे चूने और बुझे चूने में पहचान करने का एक मोटा तरीक़ा यह है कि कच्चे चूने पर नीबू का अर्क या अन्य कोई तेजाब डालने से झट बुलबुले उठने लगते हैं और बुझे चूने पर नहीं। शंख आदि कीड़ों के घरों में ज्यादातर अधिक शुद्ध चूना—९० प्रतिशत तक होता है। विभिन्न चीज़ों में बुझे चूने का अनुपात विभिन्न होता है। ज़मीन या खानों से निकली हुई

चीजों में संगमरमर और कटनी का चूनेका पत्थर सबसे बढ़िया माने जाते हैं। साबुन बनाने में चूना सीधा कोई भाग नहीं लेता बल्कि साबुन को वह बिगाड़ देता है। उसका काम तो सज्जी खार आदि से कॉस्टिक सोडा बनाने में ही पड़ता हैं। चूना मकानों की दीवारों पर प्लास्टर करने, सफेदी करने, सीमेण्ट बनाने, चमड़ा कमाने, और गोंद या गेहूँ की ग्लुटीन, या हीरे के साथ मिलाकर लकड़ी आदि जोडने का एक क़िस्म का सीमेण्ट बनाने आदि के काम आता है। शक्कर के कारख़ानों में इससे गन्ने का रस साफ़ करते हैं। यह रंगाई में भी काम आता है। बुझे चूने और क्लोरीन गेस (जोकि खाने के नमक से बनती है) को मिलाकर ब्लीचिंग (रंग उड़ाने का) पाउडर बनाया जाता है।

ट. साधारण नमक—यह नमक प्राप्त करने के मुख्य स्थान ये हैं— १. समुद्र का पानी, २. खारी झीलें, ३. नमक की खानें और ४. नमक की चट्टानें।

१. समुद्री नमक—समुद्र के पानी में लगभग ३ प्रतिशत नमक होता है। साधारण नमक के सिवा इसमें मेगनेशिअम क्लोराईड आदि अन्य लवण भी होते हैं। उक्त दोनों लवणों में से प्रत्येक का अनुपात सारे नमक में लगभग १५ प्रतिशत होता है। इन दोनों के सिवा, सोडिअम सल्फेट और पोटॅशिअम तथा कैल्शिअम (चूने) के लवण भी अल्प मात्रा में विद्यमान रहते हैं। साधारण नमक निकालने के लिए खासतौर पर इसी प्रयोजन से बने हुए उथले बरतनों में समुद्र के पानी को धूप में रखकर उड़ाया जाता है। पानी का एक भाग उड़ जाने पर साधारण नमक के स्फटिक बनकर नीचे बैठ जाते हैं, जबकि ऊपर का पानी नितार लिया जाता है। उसमें अन्य लवणों के सिवा, कुछ भाग साधारण नमक का भी होता है। स्फटिक रूप में जो साधारण नमक अलग किया जाता है उसमें भी अल्प मात्रा में अन्य लवण रहते हैं। उनके कारण (विशेषतः मैगनेशिअम क्लोराइड के कारण) समुद्री नमक बरसात में गीला और कभी कभी द्रव (पानी) हो जाता है।

२. साधारण नमक पाने की दूसरी जगह राजपुताना की सांभर झील, खाराघोडा और कच्छ की रन आदि खारी झीलें हैं। इन झीलों से भी नमक

वैसे ही निकाला जाता है जैसे समुद्र के पानी से, अर्थात् पानी धूप में सुखा दिया जाता है। यह समुद्री नमक से बहुत मिलता-जुलता भी है।

३. तीसरा स्थान, पंजाब की नमक-खानें और नमककी चट्टानें हैं। उनमें से खोदकर नमक निकाला जाता है। यह लगभग शुद्ध नमक होता है और बरसात के मौसम में भी पसीजता नहीं। साबुन में दाने डालने के लिए नमक प्रयुक्त होता है और इस उद्योग में इसका भाग अप्रत्यक्ष ही है। नवीन साधनों से कॉस्टिक सोडा और ब्लीचिंग (रंग उडाने का) पाउडर बनाने का यह मुख्य ज़रिया है।

ठ. पानी—साबुन बनाते हुए, तेल और खार में रासायनिक क्रिया होने के लिए, पानी एक बहुत ही महत्वपूर्ण मध्यस्थ का काम करता है। बिना पानी के, तेलों और सूखे खारों से साबुन बन ही नहीं सकता। धोने में और धुलाई में भी पानी की अत्यन्त आवश्यकता होती है। पानी की दो क़िस्में हैं—सख्त (खारा) और नरम (मीठा)। वर्षा का पानी और पहाड़ों या चटानों के नीचे बहता हुआ सोतों का पानी प्रायः नरम (मीठा) होता है। इस पानी में बहुत कम चीजें घुली होती हैं और इसीलिये औद्योगिक कामों में इसे पसन्द किया जाता है। इसमें साबुन खूब झाग देता है और दही-सा फटकर, न घुल सकने वाले लवण नहीं बनाता। पानी की सख्ती (खारापन) ज़मीन के कुछ लवण उसमें घुल जाने के कारण होती है। चूने के और मैगनेशिया के लवण पानी में हों तो वे साबुन को नुकसान पहुँचाते हैं। उनके साथ मिलकर साबुन पर ऐसी रासायनिक क्रिया हो जाती है कि वह झाग नहीं देता और पानी में न घुल सकने वाले लवणों में परिवर्तित हो जाता है। इसी कारण ऐसा पानी धुलाई के लिये अच्छा नहीं होता और साबुन बनाने में भी उसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

ड. साबुन में पड़नेवाले सुगन्धित तेल—साबुन में सुगन्धि के लिए इन चीजों के तेल डाले जाते हैं:—१. लौंग, २. दालचीनी, ३. सौंफ, ४. अजवायन, ५. कपूर कचरी, ६. नीबूघास, ७. निम्बू, ८. नारंगी का

छिल्का, ९. गुलाब, १० चन्दन, ११. मोगरा, १२ मुश्क (कस्तूरी), १३. हिना (मेंहदी), १४. केवड़ा, १५. खस, १६. पचौली और १७. यूकेलिप्टस इत्यादि ।

४. औज़ार (उपकरण)

साबुन बनाने के लिये ६ प्रकार के उपकरणों की ज़रूरत पड़ती है ।

१. साधारण उपकरण (औज़ार)—कॉस्टिक का लाइ (घोल) जमा करने की टंकी या हौजी, तेल रखने के बरतन, बाल्टियाँ, लोहेका तराजू और बाँट, लकडी या लोहे के कड़छे हिलाने घोटने के लिए, अंगीठी तेल पिघलाने और छोटी मात्रा में साबुन बनाने के लिए, भट्टियाँ साबुन उबालने के लिए, थरमामीटर (सेंटीग्रेड या फारनहाइट), बोमी या ट्वैडल हाइड्रोमीटर, मामूली टिन या खाली कनस्तर, चाकू या छुरियाँ, टीन के छोटे बरतन आदि ।

२. साबुन उबालने के उपकरण—छोटी-बड़ी कई कड़ाहियां ठण्डी या अधगरम विधि से साबुन बनाने के लिये, साबुन उबालने के लिये छोटे बड़े कई गहरे भगोने जिनमें कई जगह टोंटियां लगी हों,-एक तली में, एक बीच में और एक दोनों के मध्य में, और एक काँच की तख्ती ।

३. साबुन जमाने के उपकरण-बड़े साबुन के लिए लकड़ी के सांचे और छोटे साबुनों के लिए छोटी धातु की तश्तरियां या थाल ।

४. साबुन काटने के औज़ार-लम्बे छुरे, झाग हटाने की पैनिया पाट्टियां और टिक्कियां काटने के औज़ार और साबुन काटने की मेज़ ।

५. साबुन सुखाने के उपकरण—तख्ते और अलमारियाँ ।

६. साबुन छापने के उपकरण—विविध साइज़ों और आकारों के सांचे, (डाइ) आदि । ये घन, लम्बोतरे, गोल और दो-जुड़वां टिकियां आदि अनेक आकार के होते हैं ।

साबुन उबालने का भगोना

आकृति सं० १ में आगपर रखकर साबुन उबालने के भगोने का साधारण नमूना दिखाया गया है। A साबुन उबालने का भगोना खास है। इसकी गहराई लगभग ४ फुट और इसका व्यास लगभग साढ़े तीन फुट है। तली में यह किनारों पर ज़रा गोल किया हुआ है। V1 और V2 दो टोंटियां हैं। इनमें से एक तली में लगी हुई है और दूसरी तली से लगभग एक फुट ऊपर। इनको जहां कहीं काम में सुभीता हो वहीं लगवाया जा सकता है। यह भगोना भट्ठी पर मजबूती से रखा जा सकता है जैसाकि आकृति सं० २ में F और S पर दिखाया गया है। F भट्ठी है और इस तरह बनाई गई है कि सिर्फ गरम गैसें भगोने की तली के नीचे से गुजरती हैं और जहां F लिखा है वहां लोहे की जाली पर लकड़ियां जलती रहती हैं। भट्ठी का मुख F भगोने की तली से एक या डेढ़ फुट दूर रहता है और भगोने की तली तथा लोहे की जाली के बीचकी उंचाई लगभग १४ से १८ इंच तक की है। S राख गिरने की जगह है और लगभग १२ इंच ऊंची है। भट्ठी के मुखपर जहां F और S लिखा है वहां दो लोहे के दरवाज़े लगे हैं जो खुल और बन्द हो सकते हैं। ये हवा का आनाजाना काबू में रखने के लिए हैं। F से उठकर गरम गैसें भगोने की तली के नीचे से होती हुई G द्वारा निर्दिष्ट नाली में से गुज़र कर, C चिमनी में से निकल जाती हैं। इस चिमनी का व्यास लगभग ७ इंच और ऊंचाई लगभग १५ फुट है। नाली G लगभग १ वर्ग फुट चौड़ी और ४ फुट लम्बी है। B एक छोटा-सा लोहे का ढोल है जो आकृति में दिखलाये अनुसार गैस निकलने की नाली के ऊपर मध्य में रखा है। नाली की गैसें चिमनी में से निकलने के पहले इस ढोल की तली को छूती हुई गुजरती हैं। D एक तख्ती है जो ढोल B और चिमनी C के बीच में लगा दी गयी है। इससे हवा और आग को नियन्त्रित किया जाता है। ढोल B में पानी गरम किया जाता है ताकि वह सज्जी खार आदि से कॉस्टिक सोडा बनाने तथा अन्य कामों में आ सके। इससे इन्धन की बचत हो जाती है।

साबुन उबालने की विधि अन्यत्र बयान की गयी है। यह इन्तज़ाम अध उबले दानेदार साबुन के लिए उपयोगी है। दानेदार साबुन को भगोने में से निकालने का तरीका यह है :—

साबुन उबालने में आखिरी काम कर चुकने पर आग बुझा दी जाती है और भगोने को लोहे या लकड़ी के एक ढक्कन से ढककर चारों तरफ़ बोरियों से लपेट दिया जाता है, ताकि वह जल्दी ठण्डा न होने पावे। एक या दो दिन साबुन को इसी हालत में रखा जाता है। इस समय में जितना साबुन बना हो उसके परिमाण के अनुसार बरतन का सब मसाला ३ या ४ सतहों में विभक्त हो जाता है। सबसे नीचे की सतह यानी बरतन की तली में सदा रङ्गीन कास्टिक लाई (घोल) रहता है, इसे 'नाइगर वाटर' (Niger Water) भी कहते हैं। सब से ऊपर की सतह ठोस और देखने में झागदार होती है। यह कुछ-कुछ नमकीन और परखने में खारी होती है। बीच का भाग भी दो सतहों में बांटा जा सकता है। अच्छा साफ़ और पतला साबुन तो ऊपर की सतह के ठीक नीचे रहता है और काला मैला साबुन 'नाइगर वाटर' के ठीक ऊपर। यह सतह ठोस भी हो सकती है। इसमें पानी का बड़ा अंश, दाना बनाने के लिए डाला हुआ नमक और सोडा लाई (घोल) अन्य मैलों के साथ मिले हुए रहते हैं। देखो चित्र सं० २ आकृति नं० ३। साबुन का हाल देखने के लिए पहले सब से ऊपर की तह उठायी जाती है और उसके नीचे के भाग को देखा जाता है कि बरतन में द्रव (पतला) और साफ़ साबुन तो नहीं बना। यदि यह बना हो तो उसे टीन के डब्बों या छोटी बालटियों से निकालकर जमने के लिए सांचों में भर दिया जाता है। या ऐसा करते हैं कि 'नाइगर वाटर को' सबसे नीचे की टोंटी V २ के रास्ते निकाल देते हैं, यहांतक कि दूसरी तह का मैला साबुन (नाइगर साबुन) टोंटी V३ के ठीक नीचे तक पहुँच जाय। तब V२ को बन्द करके, अच्छे, साफ़ साबुन को, V३ खोलकर उसके रास्ते निकाल कर, जमने के लिए साँचों में भर देते हैं। यदि साबुन में कोई खुशबू मिलानी हो तो वह अलग बरतन में मिलाकर फिर साँचों में भरते हैं। दूसरी तह का 'नाइगर' (मैला) साबुन (Niger Soap) बालटी या टीन के बरतनों से निकालने के बाद, 'नाइगर वाटर' भी निकाल दिया जाता है।

यदि दानेदार साबुन बहुत थोड़ा बने तो साफ़ द्रव, साबुन की तीसरी तह नहीं बनती। और उस हालत में इसे भगोने से कुछ गरम और नरम अवस्था

में ही निकाल देना चाहिए। सिवा साफ़ और द्रव साबुन के, बाक़ी साबुन को सांचों में नहीं भरा जाता, बल्कि जैसाकि अन्यत्र बतलाया गया है, उसके हाथ से ही लड्डू बना लिये जाते हैं, वा छोटे-छोटे सांचों में डालकर आवश्यक वज़न और आकृति की टिकियां बना ली जाती हैं।

५. साबुन बनाने की विधियां

तेलों और कॉस्टिक खारों का रासायनिक मिश्रण कर देने की कला ही साबुन बनाने का उद्योग है। इन दोनों का परस्पर एक निश्चित सम्बन्ध है। किस तेल में कितना कॉस्टिक साबुन या पोटॅश लगेगा यह पुस्तक के अन्त में दिये हुए परिशिष्ट घ से जाना जा सकता है। साधारणतया नारियल के तेल की श्रेणी के तेल १८ से १९ प्रतिशत कॉस्टिक लेते हैं और अन्य सब तेल १३ से १४ प्रतिशत तक।

साबुन-क्रिया में जो रासायनिक परिवर्तन होता है उसका हिसाब निम्न प्रकार दिखाया जा सकता है:—

तेल=चिकनाई वाले तेजाब+ग्लिसरीन

तेल+कॉस्टिक सोडा=चिकनाई वाले तेजाब का सोडिअम लवण

(साबुन)+ग्लिसरीन

तेलों से ग्लिसरीन ९ या १० प्रतिशत निकलता है।

साबुन बनाने की विधियां संख्या में ५ हैं और वे ये हैं:—

१. ठण्डी विधि, २. गरम विधि, ३. अध-उबली विधि, ४. दाने डालने की विधि, ५. 'फिटिंग' यानी साफ़ करके जमाने या सख्त करने की विधि। प्रथम तीन विधियों में साबुन बनाने के लिए डाली गयी सब चीजें साबुन में शामिल रहती हैं। दानेदार विधि में ग्लिसरीन तथा अन्य कुछ मैल साबुन से अलग कर दिये जाते हैं और 'फिटिंग' किये हुए साबुनों में तमाम ग्लिसरीन और अन्य मैल अलग करके साबुन बिल्कुल शुद्ध व सख्त कर दिया जाता है। अब एक-एक विधि का वर्णन करते हैं।
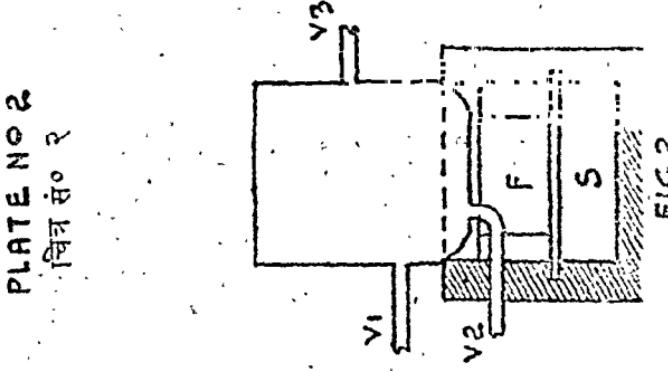
ARRANGEMENT OF SOAP BOILING KETTLE & FURNACE
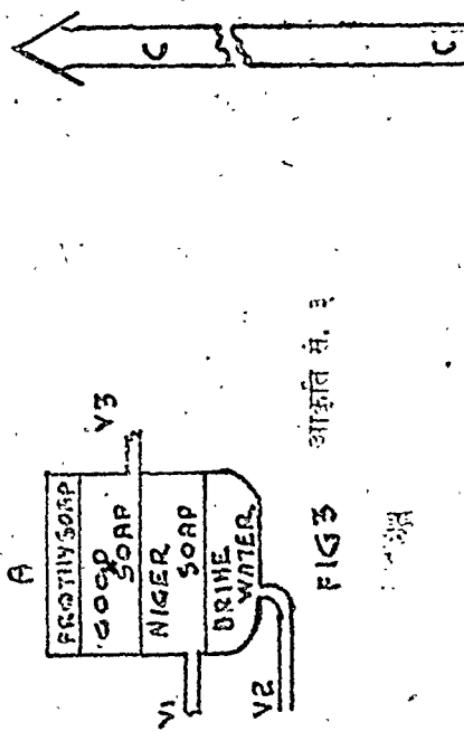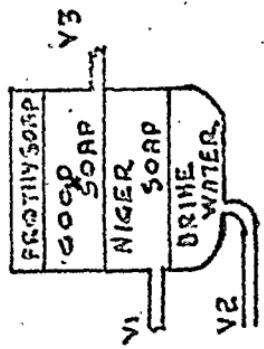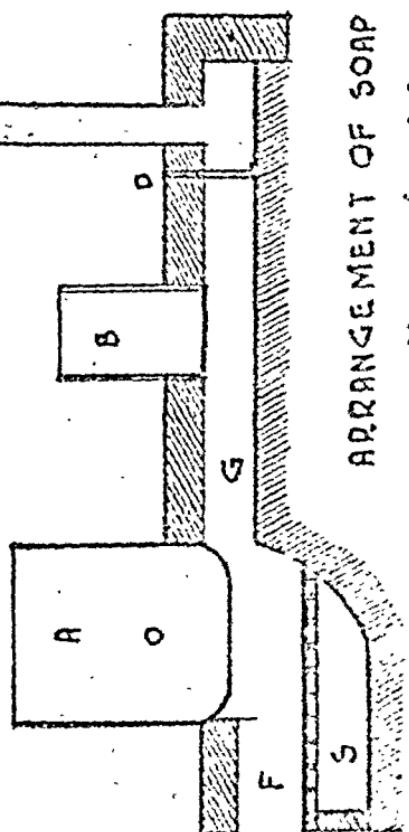
१. ठण्डी विधि के साबुन—इस विधि में तेलों या चिकनाइयों को आवश्यक कॉस्टिक सोडा लाइ (घोल) में साधारण ताप-मान पर ही मामूली ढंग से मिला दिया जाता है। ठोस तेलों या चिकनाइयों को पिघलाने के लिए आवश्यक गरमी के सिवा इस विधिमें और आंच की ज़रूरत नहीं पड़ती। हाँ, कॉस्टिक लाइ का रासायनिक मिश्रण होने पर जो कुदरती गरमी पैदा होती है उसका पूरा फ़ायदा उठाया जाता है। इकसार और एकदिल साबुन बनाने के लिये तेलों तथा कॉस्टिक सोडा का अधिक-से-अधिक शुद्ध होना आवश्यक है; इसके सिवा तेल सड़े हुए या अधिक चिकने तेजाब वाले नहीं होने चाहिए; उनमें किसी प्रकार की मिलावट भी नहीं होनी चाहिए। अलग-अलग तेलों को कॉस्टिक सोडा के अलग-अलग परिमाण की आवश्यकता पड़ती है, और ठण्डी विधि से साबुन बनाते हुए तेल तथा लाइ ठीक-ठीक नापकर डाले जाते हैं, इस कारण यदि तेल में ज़रा भी मिलावट होगी तो नतीजे में फ़र्क पड़ जायगा।

चूंकि सज्जी खार, पापड़खार और सज्जी मिट्टी से बनाये हुए कॉस्टिक सोडा लाइ की रचना में तथा विविध तेलों की रचना में बहुत विभिन्नता होती है, इसलिये किस तेल में कौनसी लाइ कितनी पड़ेगी यह पहले निश्चय कर लेना चाहिए।

जो लाइ (सोडा का घोल) काम में लाया उसका गाढ़ापन ऐसा होना चाहिए कि उससे तैयार हुए साबुन में फालतू पानी न हो। साधारणतया ३० से ३८ बोमी डिग्री तक का लाइ ठीक रहता है।

इस क़िस्म के साबुनों के लिए ज्यादातर नारियल का तेल पसन्द किया जाता है। कभी कभी मूंगफली, तिल या महुआ आदि अन्य तेल भी थोड़ी मात्रा में मिला दिये जाते हैं। इन साबुनों में वज़न बढ़ाने के लिए डाली जाने वाली चीज़ें भी मिलाई जा सकती हैं। इस प्रयोजन के लिए ज्यादातर सोडा सिलिकेट, स्टार्च यानी निशास्ता और टाल्क (साबुन सरीखी चिकनी एक खनिज वस्तु) आदि का प्रयोग किया जाता है। यदि सोडा सिलिकेट अधिक मात्रा में डाला जाय तो कॉस्टिक सोडा भी उससे ज्यादा लेना पड़ता है जितना कि अकेले तेल

में खपने के लिए काफ़ी होता। मिलावट के लिए नमक भी डाला जा सकता है, परन्तु क्योंकि देशी खारों से बने हुए कॉस्टिक सोडा लाइ (घोल) में थोड़ा बहुत नमक होता ही है, इसलिए इसका न डालना ही अच्छा है। मिलावटी चीज़ें डालने से यद्यपि साबुन सस्ता हो जाता है तथापि धोने में उनसे कुछ मदद नहीं मिलती, या बहुत कम मिलती है। इसके विपरीत, ऐसे मिलावटी साबुन कुछ समय पड़े रहनेपर हड्डी-से सख्त हो जाते हैं और धुलाई के काम के नहीं रहते। वे अपनी सख्ती और खुरदरी सतह से कपड़े को फाड़ डालते हैं। साबुन अच्छा बनाना हो तो बहुत ज्यादा और निकम्मी मिलावटों से बचना ही बेहतर है।

तेल, कॉस्टिक लाइ और जो मिलावट करनी हो उसकी आवश्यक मात्रा तोलने के बाद सबसे पहले तेल कड़ाही में छोड़ा जाता है। यदि तेल या चिकनाई जमी हुई हो तो केवल इतनी आंच दिखाई जाती है कि वह पिघल जाय और उसमें लाइ छोड़कर साथ-साथ हिलाया जाता है। निरन्तर हिलाते रहना निहायत ज़रूरी है। तेल और लाइ का ताप-मान, मिलाने के समय एक-सा और हवा के तापमान जितना होना चाहिए। जब साबुन गाढ़ा होने लगे तब, कुछ मिलावट करनी हो तो करके फिर हिलाना चाहिए। मिलावट यदि निशास्ता या टाल्क की करनी हो तो ये चीज़ें लाइ छोड़ने से पहले, तेल में ही हल कर दी जाती हैं। इनको हल करते हुए तेल में गांठ या डली नहीं पड़ने देनी चाहिए। खुशबू या रङ्ग लाइ के साथ-साथ मिलाये जाते हैं। लाइ और सब मिलावटी चीज़ें तेल में मिलाने के बाद, उन्हें घोंटते-घोंटते इतना गाढ़ा कर देना चाहिए कि मिश्रण में घोटना चलाने से उसका निशान रह जाय। अब साबुन को सांचों में भर दिया जाता है। सांचों को लकड़ी के तख्तों और बोरियों से ढक और लपेट देना चाहिए, ताकि तेल तथा लाइ की रासायनिक क्रिया से जो गरमी पैदा हो वह बरबाद न जावे और साबुन के काम आवे। एहतियात रखने से यह साबुन बहुत बढ़िया बनेगा, वरना साबुन क्रिया अधूरी रहेगी। जबतक साबुन पूरी तरह जम न जाय तबतक सांचे को छेड़ना नहीं चाहिए।

ठण्डी विधि से साबुन बनाने में किफ़ायत तो होती है, परन्तु आमतौर पर तेल और लाइ में साबुन-क्रिया (सैपोनिफ़िकेशन) पूरी नहीं होती। दोनों चीज़ें पास पास पड़ी रह जाती हैं और यदि दोनों चीज़ें ठीक-ठीक नाप से न ली गयी हों तो उनमें से एक, पूरी साबुन-क्रिया होने के बाद भी फ़ालतू बची रहती है। इस कारण इन दोनों चीज़ों का नाप लेने तथा अनुपात रखने में बहुत होशियारी की ज़रूरत होती है, खासकर तब जब कि लाइ कुदरती ज़रियों से तैयार की गई हो।

ठण्डी और अध-गरम विधियों से बने हुए साबुन बरसात में प्राय: पसीज जाते हैं।

ठण्डी विधि के साबुन का नुसखा—

नारियल का तेल	१० पौण्ड
मूंगफली, तिल या महुए का तेल	½ पौण्ड
एण्डी का तेल	½ पौण्ड

कॉस्टिक सोडा लाइ ३२ से ३५ बोमी डिग्री का इतना लिया जाय कि उसमें शुद्ध कॉस्टिक सोडा ठीक दो पौण्ड हो।

२. गरम विधि—इस विधि में ठण्डी विधि से फ़रक इतना ही है कि तेल और लाइ को मिलाने से पहले, दोनों चीज़ें १२० से १४० डिग्री फारनहाइट तक गरम कर ली जाती हैं और फिर उन्हें मिलाकर इतना घोटा जाता है कि साबुन-क्रिया पूरी हो जाय, और तब सांचों में भरा जाता है। इस विधि में तेल की साबुन-क्रिया, ठण्डी विधि की भांति, भाग्य पर नहीं छोड़ी जाती, और इसी कारण इस विधि से बना हुआ माल पहली विधि के बने माल से अच्छा होता है। इस विधि में भी मुख्यतया नारियल का तेल ही बरता जाता है। माल अच्छा बनाना हो तो तेल और लाइ का अनुपात बिल्कुल ठीक ठीक रखना चाहिए, वरना जो ज्यादा होगा वह पीछे फ़ालतू बचा रहेगा। गरम विधि से तेल में साबुन-क्रिया पूरी हो जाती है इसलिये, वह ठण्डी विधि से अच्छी मानी जाती है। उपकरण दोनों विधियों में एक ही काम आते हैं।

गरम विधि के साबुन का एक उदाहरण

नुसखे—

१. तेल नारियल ५ पौं.	२. तेल नारियल ५ पौं.	३. तेल नारियल ४½ पौं.
बरोजा ½ पौं.	तेल एरण्डी ¼ पौं.	तेल महुआ १ पौं.
अथवा	बरोजा ½ पौं.	तेल एरण्डी ४ औंस

अथवा

और तीनों के लिए कॉस्टिक सोडा लाइ ३० से ३२ बोमी डिग्री का इतना लो कि उसमें शुद्ध कॉस्टिक सोडा एक पौण्ड हो।

पहले और दूसरे नुसखे के लिए बरोजे का दरदरा चूरा कर लो। तेल का कुछ भाग कड़ाही में डालकर गरम करो। धीरे धीरे थोड़ा-थोड़ा बरोजा तेल में डालते जाओ और गरम करो, यहाँतक कि सब बरोजा तेल में घुल जाय। अब बाक़ी तेल भी कढ़ाई में छोड़ दो। उसे १२० से १४० डिग्री फारनहाइट तक ठण्डा होने दो। तीसरे नुसखे में भी तीनों तेलों को मिलाकर इसी ताप-मान तक गरम कर लो। उक्त ताप-मान पर नपा हुआ कॉस्टिक सोडा तेल में डालो और खूब घोंटने के बाद कुछ देर तक पड़ा रहने दो। देखोगे कि उसमें सूजी सरीखे छोटे-छोटे दाने पड़ गये हैं। अब फिर घुटाई करो और फिर दस मिनट तक पड़ा रहने दो। दाने और भी ज्यादा बनते दिखाई देंगे। इसी प्रकार बार बार घोंटने और छोड़ देने से सारा मिश्रण सूजी के हलवे जैसा एकदिल और दानेदार हो जायगा। घोटना जारी रखो और दाने पतले शहद सरीखे मिश्रण में बदल जायँगे। इस समय तेल और कॉस्टिक सोडा तीन भागों में बटे हुए हैं— कॉस्टिक सोडा, शुद्ध तेल और नरम शहद जैसा मिश्रण। ज्यों-ज्यों घुटाई की जायगी त्यों-त्यों शहद जैसा भाग बढ़ता जायगा और तेल व कॉस्टिक सोडा घटते जायंगे। अन्त को पिछली दोनों चीज़ें बिलकुल नहीं रहेंगी और केवल एकदिल शहद-जैसा मिश्रण रह जायगा। चाहें तो इसी समय इसे सांचों में जमाया जा सकता है और चाहें तो थोड़ी देर और घोंटकर जबकि साबुन काठा (कठिन, सख्त) हो जाय तब उसे सांचों में भरकर दबा देना चाहिए, ताकि बीच में हवा के बुलबुले न रहें और शकल ठीक सांचे-सी आजाय।

घुटाई करते हुए देखने से मालूम होगा कि ज्यों-ज्यों साबुन-क्रिया (सैपौनिफ़िकेशन) होती जाती है त्यों त्यों ताप-मान चढ़ता जाता है, या शुरू में लगातार एक-सा रहकर आखिर में बहुत जल्दी-जल्दी चढ़ता है, यहांतक कि भाफ़ निकलने लगती है और साबुन-क्रिया पूरी करनेके लिए और आंच की जरूरत नहीं पड़ती। हाँ, यदि साबुन थोड़ी मात्रा में बनाया गया हो तो यह हो सकता है कि साबुन क्रिया से पैदा हुई गरमी उस गरमी से थोड़ी रहे जो घुटाई करते हुए हवा में उड़ जाती है। ऐसी हालत में आहिस्ता-आहिस्ता थोड़ी-थोड़ी आंच दिखानी चाहिए, ताकि ताप-मान १४० डिग्री फारनहाइट पर या इससे कुछ ऊपर रहे। जब दाना बहुत मोटा हो जाय तब इतनी आंच देनी चाहिए कि वह लाइ (कॉस्टिक का घोल), तेल और शहदी साबुन में फट जाय। इसके बाद और आंच की जरूरत नहीं रहेगी, केवल घुटाई इतनी करनी पड़ेगी कि सब मसाला एकादिल शहद-जैसी शकल का होजाय। अगर कोई रङ्ग मिलाना हो तो वह लाइ डालते समय मिला देना चाहिए।

अगर मिलावट करनी हो तो विधि यह होगी:-

निशास्ता और फ्रेंच चॉक आदि मिट्टियों को तेल में ऐसा घोंट देना चाहिए कि गांठ बिलकुल न बने। सोडियम सिलिकेट और मोटा ॲश (धोबी सोडा) तब मिलाये जाते हैं जबकि तेल और लाइ घोंटते-घोंटते शीरे या शहद की शकल में आने वाले होते हैं। साबुन-क्रिया पूरी हो जाने पर ये चीज़ें साबुन का भाग नहीं बन सकतीं।

यदि सुगन्ध मिलानी हो तो वह शहद की शकल आने के तुरन्त बाद मिला देनी चाहिए। इस विधि से बनाया हुआ साबुन धुलाई के लिए अच्छा होता है, और यदि कोई मिलावट न हो तथा साबुन में लाइ या तेल फ़ालतू न हों तो नहाने के लिए भी।

३. अध-उबली विधि—सच पूछो तो 'अध-उबली' विधि नाम ठीक नहीं है। सचाई यह है कि इस विधि में, पहली दोनों विधियों के विपरीत, साबुन-क्रिया पूरी करने के लिए साबुन को अच्छी तरह उबाला जाता है। बाद

रखने की बात यह है कि इस विधि में कॉस्टिक सोडा पूरी साबुन क्रिया के लिए बिल्कुल पर्याप्त या उससे कुछ अधिक डाला जाता है। इस विधि में बरते जानेवाले बरतन, जितना तेल खर्च करना हो उससे कम-से-कम ३ या ४ गुना बड़े होने चाहिए। इस विधि में जितनी भी चीजें कड़ाही में डाली जाती हैं वे सब साबुन में खप जाती हैं और तेल तथा लाइ को पूरी तरह मिला देने के लिए खासी देर तक उबाला जाता है। इस विधि से बनाये हुए साबुनों में पानी और सोडा सिलिकेट तथा सोडा ऐश जैसी मिलावटें ज्यादा खप सकती हैं। इसलिए यह साबुन सस्ता भी पड़ता है। इस विधि में भी ज्यादातर नारियल का तेल ही बरता जाता है। विधि यह है:—

तेल तोलकर, कड़ाही में डालकर, नीचे आंच लगा कर, जब तेल कुछ गरम होजाय, तब उसमें १० से १२ बोमी डिग्री का थोड़ा लाइ डालकर घोंटा जाता है। कुछ समय बाद साबुन-क्रिया शुरू हो जायगी, जैसा कि गाढ़े मलाईदार मसाले के ज़ोर-ज़ोर से उबलने से जाहिर होगा। कभी-कभी साबुन-क्रिया नहीं भी होती। अलग-अलग तेलों में साबुन-क्रिया शुरू होने के लिए अलग-अलग घनता (गाढ़ेपन) के लाइ की आवश्यकता होती है। साबुन-क्रिया शुरू न होनेका मतलब यह है कि या तो लाइ हलका है या गाढ़ा। इस हालत में कुछ पानी और डालकर आंच देना तथा घोंटना जारी रखना चाहिए। लाइ ठीक डिग्री तक पहुँचते ही तेल में साबुन क्रिया शुरू हो जायगी। यदि लाइ हलका होने के कारण साबुन-क्रिया शुरू नहीं होती तो या तो कुछ पानी भाफ बनकर उड़ जाने दिया जाता है या ऊपर से गाढ़ा लाइ डाल दिया जाता है, ताकि कॉस्टिक सोडा का घोल उचित डिग्री तक पहुँच जाय और साबुन क्रिया शुरू हो जाय। साबुन-क्रिया शुरू होने में सहूलियत के लिए उबलती हुई कड़ाही में थोड़ा बना-बनाया साबुन कतर कर डाल दिया जाता है।

साबुन-क्रिया शुरू हुई या नहीं इसकी पहचान यह है कि इसके शुरू होने से पहले तक तेल और लाइ (कॉस्टिक का घोल) अलग अलग रहते हैं, और जब घोटने को ऊपर निकाला जाता है तब दोनों चीजें पानी-सी पतली दीखती हैं तथा उसके सिरे पर से दोनों की बूँदें अलग-अलग गिरती व टपकती

हैं। और जब साबुन क्रिया शुरू हो जाती है तब दोनों को मिलकर मलाई-सी लेई बन जाती है। मिश्रण इतना गाढ़ा हो जाता है कि भाप को बाहर निकलने में कठिनाई होती है और उसके कारण सब मसाला ऊपर को उठने लगता है। यह साबुन की लेई बनना कहलाता है। इस समय यदि एहतियात न रखी जाय तो मसाला ऊपर को उछल कर किनारों पर से बाहर गिरने लगता है। इसे शान्त करने के लिए आँच मन्दी कर देनी और ठण्डे पानी के छींटे देने चाहिए। साबुन-क्रिया में तेल तथा कॉस्टिक सोडा का रासायनिक मिश्रण होने से कुदरती गरमी इतनी ज्यादा पैदा होती है कि उसी के सहारे साबुन-क्रिया जारी रह सकती है। जब नारियल का तेल ही ज्यादा हो तब खास तौर पर ज्यादा गरमी पैदा होती है और एक बार साबुन-क्रिया शुरू हो जाने पर वह बहुत तेज़ रफ़्तार से बढ़ती है। इसमें यदि एहतियात न रखी जाय तो क्रिया काबू से बाहर हो जाती है, और कभी-कभी तो मिश्रण इतने वेग से किनारों पर होकर बाहर गिरने लगता है कि सारा बरतन खाली हो जाता है।

एक और ज़रूरी एहतियात यह रखनी चाहिए कि लाइ इतनी थोड़ी मात्रा में न डाली जाय कि तेल उसके साथ झट-से मिलकर साबुन-क्रिया समाप्त कर दे। ऐसा होने पर, साबुन-क्रिया पूर्ण हो चुकने के कारण, तब मसाला काठ सा सख्त होने का डर रहता है। इसलिये एक बार डाला हुआ लाइ समाप्त होने से पहले ही और लाइ डालते जाना चाहिए। लिए हुए तेल के लिए आवश्यक लाइ इसी प्रकार कड़ाही में छोड़ना चाहिए। साबुन को पतला और द्रव अवस्था में रखने के लिए बीच-बीच में पानी भी डालते रहना चाहिये, ताकि भाप आसानी से निकल सके। शुरू-शुरू में, जबकि साबुन-क्रिया वेग से होती है तब, झाग भी बहुत उठते हैं और मिश्रण ऊपर को आने लगता है, परन्तु साबुन-क्रिया पूरी हो जाने पर झाग बैठ जाते और मिश्रण चुपचाप उबलता रहता है। साधारण-तया साबुन-क्रिया का आरम्भ ८ से १० तक बोमी डिग्री के हलके लाइ से किया जाता है और अन्त १८ से २० बोमी डिग्री तक के गाढ़े लाइ से।

साबुन के मिश्रण में तेल ज्यादा है या खार, इसकी पहचान यह है:—

मिश्रण में एक चाकू का फलका डुबोकर उस पर थोड़ा साबुन लेकर उसे नीचे टपकाओ। यदि पतली, पारदर्शक झिल्ली बनकर गिरे तब तो समझो कि साबुन ठीक बन गया है। और मिश्रण गंदला दिखलाई दे तो समझो कि तेल और खार में से एक चीज़ ज्यादा है। मिश्रण का ज़रा-सा क़तरा जीभ पर छुआ कर देखो। अगर यह तीखा काटता हुआ लगे तो समझो कि खार ज्यादा है। तेल ज्यादा होगा तो यह जीभ पर काटेगा नहीं। तेल ज्यादा हो तो थोड़ा खार और खार ज्यादा हो तो थोड़ा तेल और मिला देना चाहिए। परन्तु इस अतिरिक्त मिलावट की मात्रा बड़ी एहतियात से निश्चित करनी चाहिये। साबुन ठीक बन गया या नहीं, इसकी अन्तिम पहचान यह है कि मिश्रण एक-दिल होना चाहिए और जब उसे चाकू के फलके पर लेकर टपकाया जाय तो पतली पारदर्शक झिल्ली बनकर गिरना चाहिये। जीभ पर यह बहुत कम काटता है। एक और पहचान यह है कि यदि मिश्रण को हाथ की अंगुली में लेकर मला जाय तो उसका तार साफ़ पारदर्शक बनता है। तीसरी पहचान यह है कि यदि गरम-गरम मिश्रण की दो-एक बुंदें साफ कांच पर गिराई जायं तो ठण्डा होने तक पारदर्शक रहती है और जम कर सफ़ेद हो जाती है। इसमें खार ज्यादा होगा तो बून्दें तुरन्त ही सफेद पड़ने लगेंगी और तेल ज्यादा होगा तो उसके किनारों पर तेल का मैला-सा रंग दीख पड़ेगा। कांच पर पड़ी हुई बूंदों को अंगुली से दबाया जाय तो वे फटनी नहीं चाहिए।

साबुन बन जाने पर उसे कुछ देर ठण्डा होने और बैठने देना चाहिए, ताकि उसके झाग दब जाँय। तब उसे सांचों में भरना चाहिए। यह काम प्रायः तब किया जाता है जब ताप-मान १६० या १७० डिग्री फारनहाइट पर आ जाता है : यह साबुन ज्यादातर धोने के काम आता है। और इसमें धोबी-सोडा तथा सोडीअम सिलीकेट मिला दिया जाता है। धोबी-सोडा तेल के वजन का ५ से ७॥ तक प्रतिशत और सोडा सिलिकेट १५ से २० तक प्रतिशत मिलाया जाता है। ये दोनों चीजें अलग-अलग मिलाना चाहिए। धोबी-सोडा अपने से दुगने पानी में और सोडा सिलिकेट बराबर पानी में घोलकर, साबुन सांचों में भरने से पहिले, उसमें मिला दिये जाते हैं। रंग डालना हो तो बहुत थोड़ा

डालना चाहिए। आमतौर पर निबूई पीला या 'मैटालिन' पीला रंग मिलाया जाता है। रंग, उबलते हुए गरम पानी में घोलकर, छानकर डालना चाहिए।

सोडिअम कारबोनेट (धोबी-सोडा) सारे साबुन के २ या २॥ प्रतिशत से ज्यादा नहीं होना चाहिए, वरना वह साबुन सूखने पर उसकी सतह पर आ जाता है। इसी तरह सोडिअम सिलिकेट साबुन के वज़न का ५ या १० प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिये। सांचों में भरने के बाद जमने तक साबुन को छोड़ना नहीं चाहिए। जम जाने पर उसे सांचों में से निकालकर एक दिन खुली हवा में सूखने देना चाहिये। अब इसे काटकर इसकी सिलें (शिलायें) या पट्टियां बनाई जा सकती हैं।

इस किस्म के साबुन में साधारणतया ५० से ५५ प्रतिशत तक पानी रहता है।

नुस्खा—

नारियल का तेल	६ भाग
महुआ का तेल	३/४ भाग
बरोजा	१/४ भाग और

कॉस्टिक सोडा इतना जो तेल में पूरी तरह खप जाय।

४ दानेदार साबुन—ठण्डी, गरम और अध उबली विधियों में मुख्यतया नारियल का तेल ही बरता जाता है, अन्य तेल बहुत थोड़े-थोड़े मिलाये जाते हैं। इन विधियों में तेलों का साफ़ व शुद्ध होना आवश्यक है, क्योंकि कड़ाही में डाली गयी सब चीजें साबुन का भाग बन जाती हैं। दानेदार साबुन में, कोई भी ऐसा वानस्पतिक तेल डाला जा सकता है जिसमें साबुन-क्रिया हो। तेल का साफ़ होना भी जरूरी नहीं। जरूरत केवल इतनी है कि उसमें कोई खनिज तेल (किरासीन आदि) न मिला हो, क्योंकि इनका साबुन बन ही नहीं सकता। दाने डालने का काम आमतौर पर नमक से लिया जाता है। नमक के घोल की एक खास बनता पर, साधारणतया ७ से १० प्रतिशत पर, साबुन मिश्रण से अलहदा हो जाता है। ऐसा होते हुए मिश्रण के सब मैल, ग्लिसरीन भी, साबुन से अलग

हो जाते हैं। साबुन दानेदार बनकर नमक के घोल पर तैरने लगता है और नमकीन घोल को नीचे की टोंटी के रास्ते निकाल लिया जाता है। महुआ, तिल और मूंगफली के तेल थोड़े ही नमक से फट जाते हैं। नारियल-श्रेणी के तेलों को फाड़ने के लिए ज्यादा नमक की जरूरत पड़ती है और फट चुकने पर भी उनमें नमकीनपन हर सूरत में क़ायम रहता ही है। इसी कारण उनमें महुआ, तिल आदि तेल मिलाकर उन्हें काम में लाते हैं। दाने डालने के लिए कॉस्टिक सोडा भी काम दे सकता है, परन्तु यह महंगा पड़ता है। इसके सिवा, दाने बनाने वाली चीज़ साबुन में थोड़ी बहुत हमेशा रह ही जाती है। इस कारण जिस साबुन में कॉस्टिक सोडा से दाना डाला जायगा वह उदासीन न होकर खारा रहेगा।

दानेदार या दाना शब्द का प्रयोग इस कारण किया जाता है कि जब नमक या कॉस्टिक सोडा डालने पर साबुन द्रव से अलहदा होता है तब वह देखने में दानेदार होता है। उसका ऐसा दीखना इस बात पर भी निर्भर करता है कि दाना बनाने के लिए नमक कितना डाला गया। अगर नमक ज्यादा डाला जायेगा तो दाना बड़ा और मिश्रण गाढ़े दही-सा हो जायगा। नमक थोड़ा डाला जायगा तो दाना छोटा और मिश्रण पतला, पतले दही सा, रहेगा। तेल मैला या घटिया हो तो उसका मैल अच्छी तरह निकालने के लिए ज्यादा नमक डालना पड़ता है। साबुन उसी तरह उबालना पड़ता है जिस तरह अध-उबली विधि में बतलाया गया है। इतनी एहतियात ज़रूर रखनी पड़ती है कि उबालने के लिए बरतन खासी समाई का लिया जाय। दाना बनाने की क्रिया में, साबुन बरतन में उफनता बहुत है। आम तौर पर, जितना तेल डालना हो उसका पांच-गुना बरतन लेना ठीक रहता है। तेल और कॉस्टिक सोडा में साबुन-क्रिया करने का तरीका वही है जो अध-उबली विधि में। जब तेल में साबुन-क्रिया खासी हो जाय—साबुनसाजों की भाषा में कहें तो जब तेल मर चुके—तब थोड़ा-थोड़ा करके कई बार नमक छोड़ा जाता है, और प्रतिबार नमक डालने के बाद सारा मिश्रण खूब उबाला जाता है, ताकि वह भलीभाँति हिल-मिल जाय। पहली बार नमक डालने पर साबुन द्रव बन जाता है, और अधिक नमक छोड़ने पर

छोड़ने पर बाकी द्रव से अलहदा हो जाता है। दाना ठीक-ठीक पड़ गया या नहीं, यह देखने के लिये साबुन को छुरी पर लेकर टपकाते हैं। यदि साबुन और नमकीन पानी अलहदा-अलहदा टपकें तो दाना ठीक पड़ गया समझना चाहिए। अब साबुन को खूब उबाल कर ठण्डा होने देना चाहिए। यदि थोड़ा साबुन बनाया हो तो ६ से ८ घण्टे तक, और यदि ज्यादा हो तो लगभग १२ घण्टे तक। इससे कम समय में साबुन और नमकीन पानी पूरी तरह अलहदा नहीं होते। इसके बाद तली में बैठे हुए नमकीन पानी को तली की टोंटी से निकाल लिया जाता है। इस बीच, तेल के तमाम मैल और ग्लिसरीन, नमकीन पानी में घुल जाते हैं और ऊपर का साबुन प्रायः शुद्ध रह जाता है। नमकीन पानी निकाल लेने के बाद, साबुन को ८ से १० तक बोमी डिग्री के हलके सोडा लाइ के साथ फिर उबाला जाता है। साबुन को अच्छी तरह उबलने देने और उसे द्रवावस्था में ही रखने के लिये थोड़ा पानी भी डाला जाता है। यह पानी गरम होना चाहिए। दुबारा लाइ के साथ उबालने का प्रयोजन यह है कि यदि पहली बार की साबुन-क्रिया से कुछ तेल बच गया हो तो वह भी साबुन बन जाय, पीछे से डाला हुआ लाइ इस तेल को साबुन में बदल देने के लिए काफ़ी होना चाहिए। हरेक बार लाइ डालने के बाद साबुन खूब उबाला जाना चाहिए और देख लेना चाहिए कि लाइ साबुन में खप रहा है या नहीं। लाइ इतना डालना चाहिए कि देर तक उबालने के बाद भी यदि साबुन जीभ पर रखा जाय तो वह उसे काटता हो, और अध-उबली विधि में पूर्ण साबुन की जो पहचानें बयान की गयी हैं वे सब उसपर पूरी उतरें।

इसके बाद साबुन को कुछ देर और उबाल कर उसमें दुबारा दाना डालने की क्रिया की जाती है। इस बार नमक पहली बार की अपेक्षा कम डाला जाता है। ६ से १२ घण्टे तक बैठने देकर मैला पानी नीचे की टोंटी में से निकाल लिया जाता है। अब साबुन को कड़ाही में से निकाल कर उसके लड्डू या टिकियां बनायी जा सकती हैं। अथवा चाहें तो उसमें कुछ गरम पानी और डालकर भलीभांति उबाल सकते हैं, ताकि साबुन में से रहा-सहा नमकीन पानी भी साफ हो जाय। यह पानी केवल इतना डालना चाहिए कि उबलता हुआ

सावुन छुरी के फलके पर लेकर टपकाया जाय तो वह उसपर बिना चिपटे नीचे फिसल जाय। यदि सावुन उसपर चिपटे तो १२-१३ बोमी डिग्री के नमकीन पानी की इतनी थोड़ी मात्रा डाल देनी चाहिए कि यह चिपटन दूर हो जाय। अगर पहले से एहतियात रखी जायगी तो यह नमकीन पानी डालना ही नहीं पडेगा। सावुन ठीक बन चुकने पर अच्छी तरह उबाल कर, एकाध दिन कडाही में ही पड़ा रहने दिया जाता है। कडाही बोरियों से लपेट देनी चाहिए, ताकि सावुन जल्दी ठण्डा न हो। अब नमकीन पानी तमाम मैल सहित सावुन से अलहदा हो जायगा। यह सावुन, पहले नमकीन सावुन से बढ़िया होता है और इसे घोंटकर, सांचों में भरकर, मनचाही आकृति की टिकियों में काटकर उनपर अपना ठप्पा लगाया जा सकता है। अगर सावुन बहुत बड़ी मात्रा में बनाया जायगा और धीरे-धीरे ठंडा किया जायगा तो वह निम्न चार भागों में विभक्त हो जायगा।

१. सबसे नीचे नमकीन पानी की थोड़ी-सी तह। २. उसके ऊपर नमक और पानी लिए हुए सावुन की तह। ३. इसके ऊपर साफ़ पारदर्शक द्रव सावुन। इसकी मात्रा अन्य सब तहों से अधिक होनी चाहिए। ४. और सबसे ऊपर झागदार सावुन। (देखो चित्र सं० २ आकृति सं० ३) नीचे की तरफ़ से दूसरी और चौथी तहों को एक कपड़े पर फैला कर, खूब गून्ध कर, टिकियों के साइज़ के सांचों में भरकर, मन-चाही आकृति की टिकियें बना लेना और उन पर अपना ठप्पा लगा लेना चाहिए। चाहें तो इन दोनों तहों के सावुन को कुछ और पानी में उबालकर, नरम करके, उसकी पट्टियां बनायी जा सकती हैं।

नीचे की तरफ़ से तीसरी तह के साफ़ सावुन को सूखने व जमने के लिए सांचों में भर देना चाहिए। अगर कोई खुशबू मिलानी हो तो सावुन के गरम रहते ही, सांचों में मिला देनी चाहिए। इस साफ़ सावुन को बरतन में से निकालने के लिए, पहले सबसे ऊपर की झागदार सावुन की तह आहिस्ता से निकाली जाती है। उसके नीचे जब साफ़ सावुन दीखने लगता है तब उसे छोटे टीन के बरतन द्वारा निकाल लिया जाता है। (सावुन उबालने के कडाही का प्रकरण भी देखो) दानेदार विधि से सावुन १५० प्रतिशत तक बनता है। इस सावुन में लगभग ३० प्रतिशत पानी होता है।

यदि बरोजा मिलाना हो तो पहली बार दाना डालने के बाद मिला देना चाहिए। परन्तु घर में थोड़ी मात्रा में जो साबुन बनाया जाता है, उसमें से चूंकि ग्लिसरीन अलग करना सम्भव नहीं होता, इस कारण बरोजा शुरू में भी मिलाया जा सकता है।

'फिटेड' साबुन—साबुन को खूब साफ़ करके, उसका बारीक चूरा बनाकर, दबाने की मशीन में उसे दबाकर, फिर टिकिया या पट्टी की आकृति में कर देने की विधि का नाम अंग्रेजी में 'फिटिंग' है। और इस विधि से जो साबुन बनाया जाता है उसे 'फ़िटेड' यानी 'फ़िट' किया हुआ साबुन कहते हैं। साबुन को फ़िट करने का प्रयोजन यह है कि उसमें से मैल अन्तिम अंश तक निकालकर बिल्कुल शुद्ध माल हासिल किया जाय। इस विधि में तेल में साबुन-क्रिया करने और दाना डालने का तरीका तो वही है जो दानेदार साबुन की विधि में; भेद केवल इतना है कि दूसरी बार दाना डालने के लिए नमक की बजाय कॉस्टिक सोडा इस्तेमाल किया जाता है। पहली बार दाना डालने के बाद, नमक-मिला साबुन, नमकीन पानी से अलग कर लिया जाता है। इसे नमक का बदलना कहते हैं। इस साबुन को हलके सोडा लाइ के साथ इतना उबाला जाता है कि जो कुछ तेल बाकी हो वह पूरी तरह साबुन बन जाय। फिर उसमें २५ से ३० तक बोमी डिग्री के तेज़ सोडा लाइ द्वारा दाना डालने कि विधि की जाती है। बैठ जाने पर, लाइ को साबुन से अलहदा कर लिया जाता है। इस साबुन में नमक बिल्कुल नहीं होता। इस साबुन को थोड़े-थोड़े गरम पानी में कई बार इतना उबाला जाता है कि यदि इसे छूरी के फलके पर रखकर टपकाया जाय तो यह उसपर से फिसल जाय और उसके किनारों पर चिपटे नहीं। यही 'फिट' करने की क्रिया है। इसे करने के लिए होशियारी और अनुभव की ज़रूरत है। इस क्रिया के बाद, साबुन की मात्रा के अनुसार, उसे २ दिन से ७ दिन तक, बैठने के लिए छोड़ दिया जाता है। इस मियाद की समाप्ति पर साबुन उन्हीं चार तहों में बंट जाता है जिनका बयान दानेदार विधि में किया जा चुका है। इतना भेद अवश्य रहता है कि सबसे नीचे की तह में नमक की बजाय कॉस्टिक सोडा का घोल होता है। साफ़ साबुन की

तह पूर्वोक्त विधि के अनुसार ही अलग कर ली जाती है (देखो चित्र सं. २ आकृति सं. ३) और 'नाइगर' साबुन और झागदार साबुनों को नया साबुन बनाते हुए उसमें डाल दिया जाता है।

इस साबुन को नहाने आदि श्रृंगार के काम में लाना हो या इसे सर्वथा उदासीन बनाना हो तो सांचों में भरने के पहले इसे किसी चिकने या बोरिक तेजाब से उदासीन कर लिया जाता है, यानी इसके खार अंश को तेजाब से मार दिया जाता है। घरों में या गांवों में जिस छोटे पैमान पर साबुन बनाया जाता है उसमें 'फिटेड' साबुन बनाना सम्भव नहीं है।

६. **नरम साबुन**—नरम साबुन तेलों से और कॉस्टिक पोटॅश से बनता है। इस साबुन को बनाने में मुख्यतया शुष्क और अर्ध-शुष्क श्रेणी के तेल बरते जाते हैं। तरीका वही है जो गरम और अध-उबले साबुन बनाने का। भेद केवल इतना है कि कॉस्टिक सोडा की जगह कॉस्टिक पोटॅश बरता जाता है। इस साबुन में दाना नहीं डाला जाता।

७. **शृंगार के साबुन**—शृंगार के साबुन प्रायः दानेदार और 'फिटेड' साबुन के बनते हैं। इस साबुन का सर्वथा उदीसान (जिसमें न तेल फालतू हो न खार) होना जरूरी है। जमा हुआ साबुन पट्टियों में काट कर कतरने की मशीन से उसके बहुत बारीक-बारीक कतरे कर दिये जाते हैं। ये कतरे सुखाकर एक पीसने की मशीन के बेलनों में से गुजारे जाते हैं। यह मशीन इन कतरों को मिलाकर, इनकी फीते-सी बत्तियां बना देती है। इन बत्तियों में रंग और सुगन्ध मिलाकार इन्हें फिर पीसने की मशीन में से गुजारा जाता है। दूसरी पिसाईके बाद साबुन को एक दबाने की मशीन में डाला जाता है। उसमें से इस साबुन की पट्टियां बनकर निकलती हैं। इन पट्टियों को, मन-चाही शक्ल और वज़न की टिकियों में काटकर, उनपर ठप्पे की मशीन से ठप्पा लगा दिया जाता है।

साबुन जमाने के सांचे

पहले बतलायी गयी किसी भी विधि से साबुन क्यों न बनाया जाय,
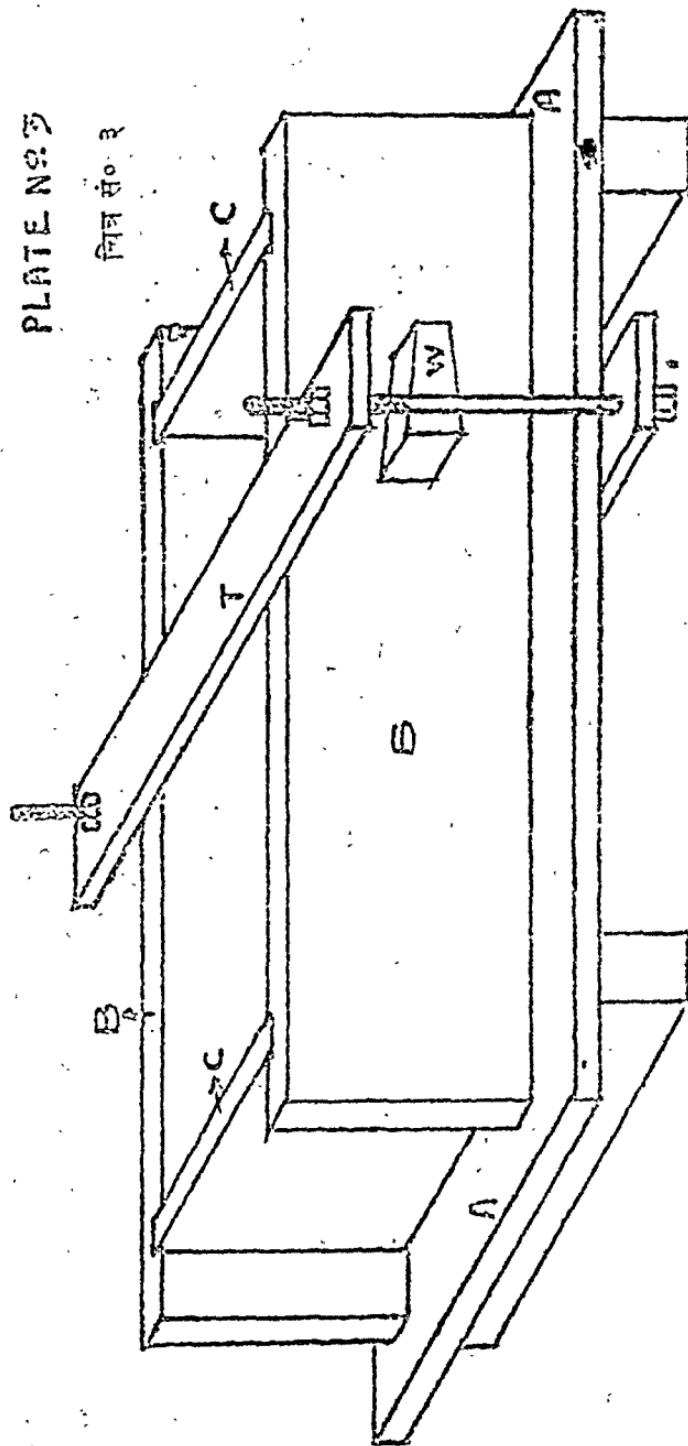
SOAP COOLING FRAME.

साबुन जमाने का फ्रेम
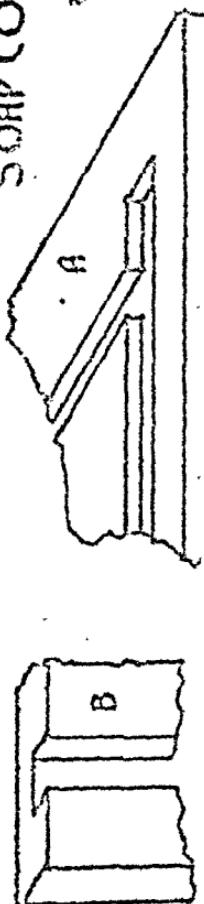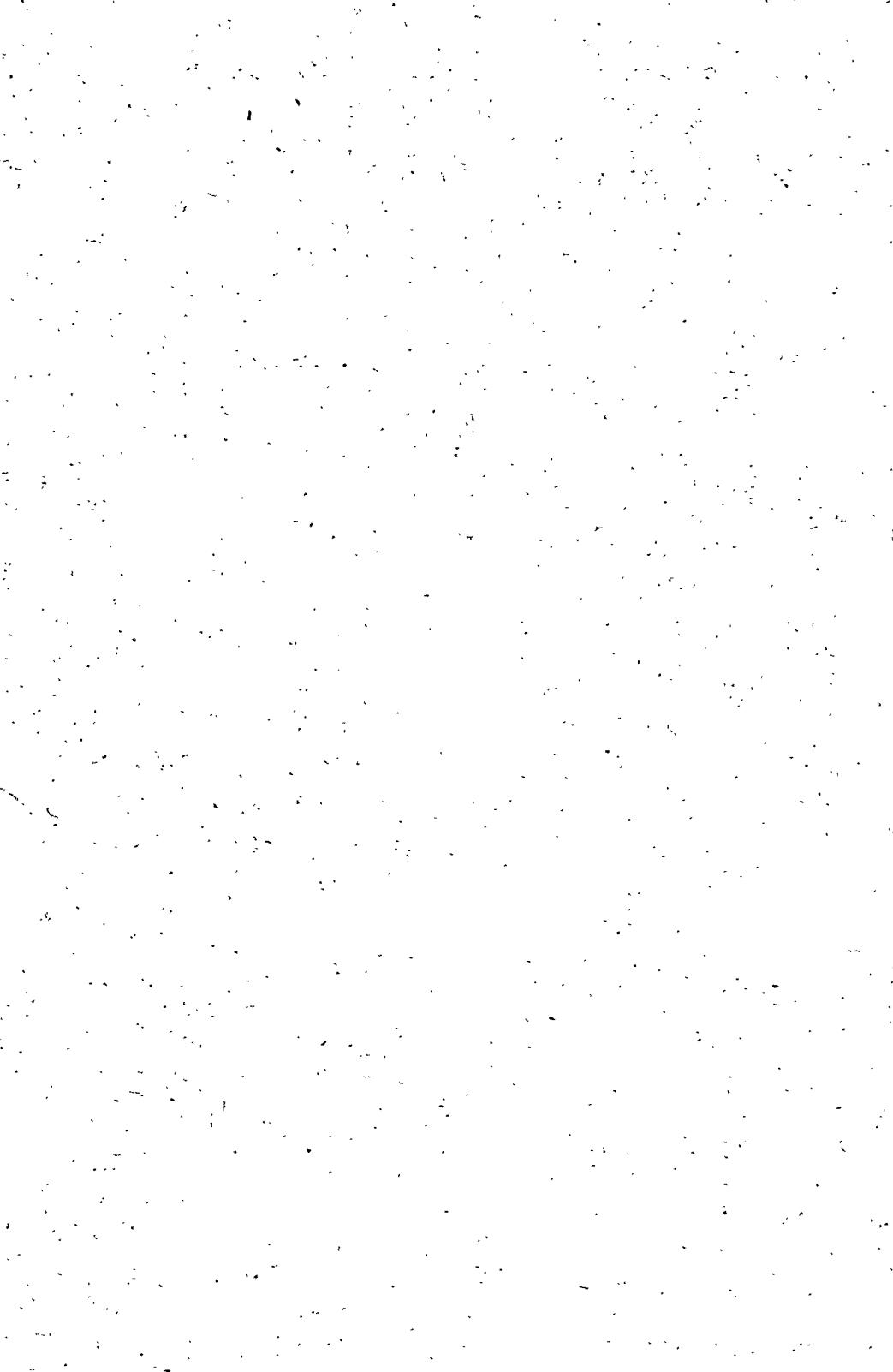
उसे ठण्डा करने और जमाने की ज़रूरत पड़ती है। यह काम धातु या लकड़ी के चौकोर सांचों में किया जाता है। इनको बनाते हुए इनके साइज की तरफ़ बहुत ध्यान दिया जाता है, ताकि इनमें जमे हुए साबुन की जब पट्टियां या टिकियां काटी जायं तब कम-से-कम साबुन बरबाद हो। साधारणतया सांचे की चौड़ाई १५ इंच रखी जाती है, क्योंकि साबुन की पट्टियां भी प्रायः इतनी ही लम्बी होती हैं।

चित्र सं० ३ आकृति सं० १ में एक लकड़ी का जमाने का सांचा दिखाया गया है। यह पांच तख्तों का बना हुआ है। AA तले का तख्ता है और ७५ इंच लम्बा, २४ इंच चौड़ा तथा २ इंच मोटा है। इसके किनारों पर दो लकड़ी की पट्टियां ठोंककर, उनसे पायों का काम लिया गया है। इस तले के तख्ते के चारों किनारों पर २ इंच चौड़े और १ इंच गहरे खांचे बनाये गये हैं। इन खांचों से बना हुआ चतुष्कोण ६३ से ६४ इंच तक लम्बा और १५ इंच चौड़ा है। B और B दो लम्बे तख्ते हैं जो ७२ या ७३ इंच लम्बे, २१ इंच चौड़े और २ इंच मोटे हैं। इन तख्तों में भी लम्बाई के दोनों किनारों पर २॥–३ इंच जगह छोड़कर २ इंच चौड़े और १ इंच गहरे खांचे बनाये हुए हैं। प्रत्येक तख्ते के दोनों खांचों के बीच का अन्तर लगभग ६४–६५ इंच है। C और C दो साफ़ लकड़ी के तख्ते हैं। इनकी चौड़ाई १७–१७ इंच, ऊंचाई २१–२१ इंच और मोटाई २–२ इंच हैं। इन सब तख्तों को जब खांचों में फंसाकर खड़ा किया जाता है, तब एक बक्स की शक्ल (देखो चित्र) बन जाती है। और बक्स के अन्दर की जगह ६३"×१५"×२०" इंच रहती है। तख्तों पर खांचों की बीच की जगह में, बक्स के अन्दर की तरफ़, लोहे की चद्दर मढ़ी हुई होती है। इन तख्तों को बक्स की शकल में इकट्ठा करने के बाद इनको ऊपर नीचे लोहे के (आकृति में T द्वारा निर्दिष्ट) शिकन्जों से, (चित्र में शिकन्जे का केवल ऊपरी भाग दिखाया गया है) और दायें-बायें (आकृति में W द्वारा निर्दिष्ट) पच्चरों से जकड़ दिया जाता है।

इस सांचे की समाई लगभग ५ हण्ड्रेडवेट की है। (१ हण्ड्रेडवेट लगभग ५६ सेर) ज़रूरत के मुताबिक़ लकड़ी के सांचे इससे छोटे भी बनाये

जा सकते हैं। एक हण्ड्रेडवेट साबुन जमाने के लिए अन्दाज़न दो घन-फुट जगह की ज़रूरत होती है। साबुन ज़माने के लिए तैयार होने से पहले ही सांचा जोड़कर तैयार रखा जाता है। यदि साबुन पतला और द्रवावस्था में हो तो सांचे के जोड़ों में गेहूँ का आटा सख्त गूंधकर लगा देना चाहिए, ताकि साबुन बाहर न निकले। साधारणतया, साबुन कुछ ठण्डा होने पर, १५० से १६० डिग्री फारनहाइट पर, सांचों में भरा जाता है। साबुन जमने में ३ या ४ दिन लगते हैं। तब सांचे के बाहर का लोहे का शिकञ्जा खोलकर, किनारों के तख्ते आहिस्ता से हटा दिये जाते हैं, और काटने से पहले साबुन को खुली हवा में एकाध दिन और सूखने दिया जाता है। छोटे सांचों और धातु की परातों में साबुन जल्दी, एक या दो रोज़ में ही सूख जाता है। सांचों को पूरा किनारे तक न भरकर २-३ इंच कम रखा जाता है। धातु की छोटी-छोटी परातों में से, जिनके किनारे लकड़ी के सांचों की तरह जुदा नहीं किये जा सकते, साबुन निकालने के लिए, या तो चारों तरफ़ चाकू फेरकर या किनारों को ज़रा बाहर की तरफ़ झुकाकर, साबुन किनारों से छुड़ा दिया जाता और परात को उलट दिया जाता है, जिससे साबुन बरतन से अलहदा होकर गिर पड़ता है।

साबुन का काटना और 'फ़िनिश' करना

साबुन के जमे हुए घन को सांचों में से निकालकर, काटने से पहले एकाध-दिन खुली हवा में सुखाया जाता है, ताकि ऊपर की सतह भी जरा सख्त होजाय। बाज़ार में जो साबुन बिकते हैं वे प्रायः एक-या दो टिकियों की पट्टी की शकल में या विभिन्न वज़नों व आकृतियों की टिकियों में कटे हुए होते हैं। सांचे में जमे हुए साबुन को काटने और 'फ़िनिश' करने में निम्न क्रियाएं करनी पड़ती हैं :—

१. सतह पर से झाग साफ़ करना।

२. शिलायें काटना।

३. पट्टियां काटना।

४. टिकियाँ काटना।

५. ठप्पा लगाकर सुन्दर बनाना तथा 'फ़िनिश' करना।

अथवा

यदि साबुन सांचे में न जमाया गया हो और दानेदार या अन्य किसी किस्म का हो तो—

१. उसे मलकर गूंध कर जितनी बड़ी या छोटी टिकियें बनाना हो उतने साइज़, वज़न तथा आकृति के सांचों में डालकर, निकालकर, ठप्पा-मशीन से टिकियों पर अपने नाम, छाप आदि का ठप्पा लगा दिया जाता है।

२. अथवा साबुन को प्यालों में जमाया जाता है।

३. या जितने वज़न की इच्छा हो उतने के लड्डू बांध लिए जाते हैं।

सांचे में जमाये साबुन का काटना

१. खुरचना—कभी-कभी साबुन के घन की ऊपर की सतह झागदार या ऊँची नीची अनियमित होती है। इसे पहले किसी लम्बी छूरी या खुरचने से खुरच लिया जाता है। खुरचना एक मज़बूत लम्बी-पतली फौलादी तार के दोनों सिरों पर छोटे-छोटे लकड़ी के टुकड़े बांधकर या आगे बतलाये हुए शिल-कटने (शिला काटने का यन्त्र) के समान बनाया जा सकता है, भेद केवल इतना रहेगा कि शिल-कटने में तार नीचे के तख्ते से ज्यादा ऊंचा लगाया जाता है और खुरचने में आधे-क इन्च से ज्यादा ऊँचा रखने की जरूरत नहीं।

२. शिलायें काटना—ऊपर की सतह पर से झाग आदि साफ़ करने के बाद साबुन के घन को शिलाओं में काटा जाता है। इसका एक आसान तरीका यह है कि शिलायें जितनी मोटी रखनी हों उतनी-उतनी दूरी पर घन में लकीरें डाल दी जाँय। इन्हीं लकीरों पर एक लम्बा, मजबूत, पतला फौलादी तार रखकर उसे होशियारी के साथ साबुन के बीच में से गुजार दिया जाता है, और शिलायें कट जाती हैं। इसे करने का तरीका चित्र सं. ४ आकृति नं. १ में दिखाया है। S साबुन का घन है। m, m_1, m_2, m_3, m_4 आदि घन पर लगाये हुए निशान हैं। C निशान लगाने का कलम या बुरुश है। ये निशान, शिला

जितनी मोटी रखनी है उतनी ही दूरी पर, लगाये गए हैं। W. W. एक लम्बा फौलादी तार है, जिसके सिरोंपर H और H लकडी के छोटे-छोटे हत्थे बंधे हुए हैं। ऊपर की शिला घन से बिल्कुल जुदा हुई दिखलाई गई हैं और शिला काटने का तार दूसरी शिला को काटता हुआ दिखलाया गया है।

साबुन की शिलायें, चित्र सं. ५ आकृति सं. १ में दिखलाये गये शिल-कटने से भी काटी जा सकती है। इस चित्र में a, b और $b1$ शिलकटने का लकडी का फ्रेम है। a फ्रेम की तली का तख्ता है, जो २० या २२ इंच लम्बा, ७ इंच चौड़ा और $\frac{3}{4}$ इंच मोटा है। इस पर b और b दो तख्ते खड़े करके जड़े गये हैं। ये लगभग ७ इंच लम्बे, ६ इंच ऊँचे और $\frac{3}{4}$ इंच मोटे हैं। c_1, c_2, और c_3 तीन छोटे-छोटे लकडी के टुकडे हैं, जो ७ इंच लम्बे, २ इंच ऊँचे और $\frac{3}{4}$ इंच मोटे हैं। ये तली के तख्ते के दूसरी तरफ, किनारे से २ या ३ इंच जगह छोडकर जड़े गये हैं। c_1 और c_2 के बीच में दो छेद इतने मोटे बनाये गये हैं कि उनमें से एक बड़ा पेच गुज़र सके। c_3 के बीच में भी एक छेद बनाया गया है कि उसमें लोहे का तार गुजर सके। b और b_1 तख्तों में जितनी मोटी शिलायें काटनी हों उतनी मोटाई के अनुसार, खाँचे काट दिये जाते हैं। ज्यादातर ये २$\frac{1}{4}$ से २॥ इंच तक लम्बे होते हैं और तली के तख्ते से समानान्तर रहते हैं। (चित्र में शिल-कटने के तार की ऊँचाई देखो)। एक तार को, पहले तख्ते c_3 के छेद में से गुज़ारकर, छेद के पास ही उसका एक सिरा एक कील से बांध दिया जाता है। बाक़ी तार को b और b_1 तख्तियों में कटे हुए खाँचों में गुज़ार कर, मुख्य तख्ते के ऊपर की तरफ़ ले जाकर, c_1 और c_2 तख्तियों में लगे हुए पेंच के किनारे पर खींच कर बांध दिया जाता है। इस पेंच को घुमाकर तार कसा या ढीला किया जा सकता है। तार मुख्य तख्ते से बिल्कुल समानान्तर होना चाहिए, वरना शिलायें एक-सी मोटी नहीं कटेंगी। बस, यह शिल-कटना तैयार हो गया।

जब साबुन की शिलायें काटनी हों तब इस शिल-कटने के बड़े तख्ते का निचला भाग साबुन के घन की ऊपरकी सतह पर रखकर उसे खींचा जाता है, और नीचे लगा हुआ तार शिला काट देता है। शिलाओं को उठा-उठाकर अलग
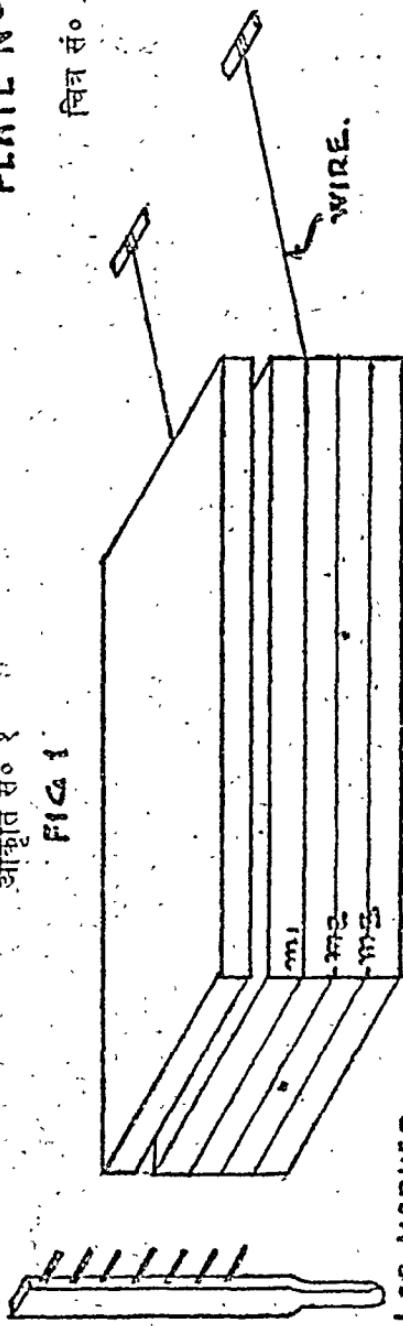
PLATE N° 4
चित्र सं० ४
आकृति सं० १
FIG 1
WIRE.
SLAB MARKER
शिला-चिन्ह लगाने
का औजार
SOAP SLABBING BY SINGLE WIRE
एक तार से साबुनकी शिलाएं काटना
FIG 2
आकृति सं० २
PILING OF SOAP SLABS
साबुनकी शिलाएँ जमा करना
FIG 3
आकृति सं० ३
PILING OF SOAP BARS
साबुन की पट्टियों का ढेर
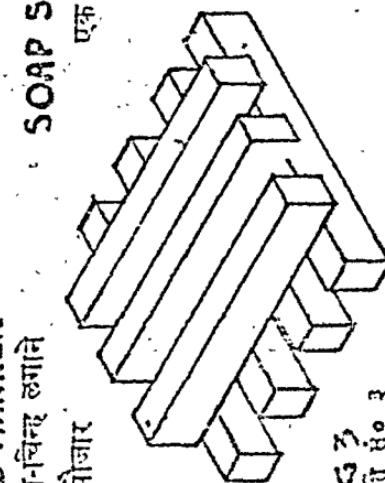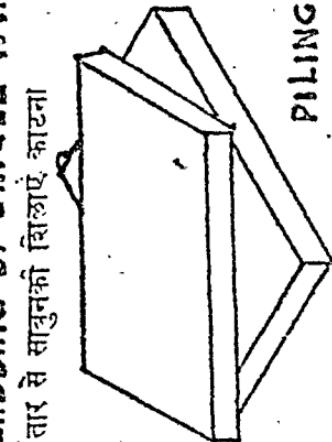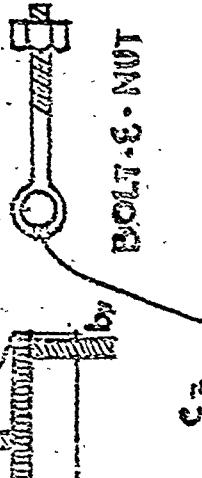
PLATE No 5
चित्र सं० ५
BOLT
NUT
WIRE
SECTIONAL ELEVATION OF
SOAP SLABBER
शिल-कटनेके तारकी उंचाई देखो
BOLT-E-NUT
FIG 1
SOAP SLABBER
शिल-कटना
आकृति सं. २
FIG 2
BAR-CUTTER
पट्टी-कटना
FIG 3
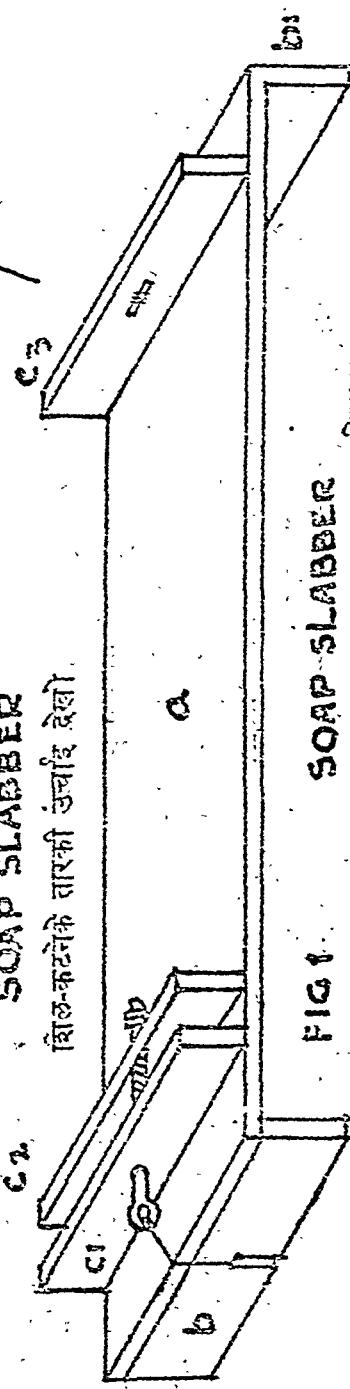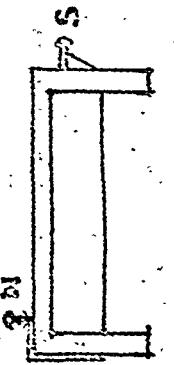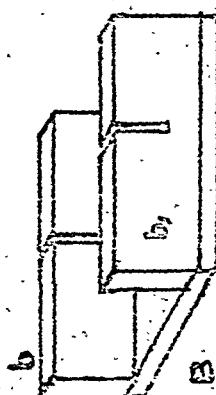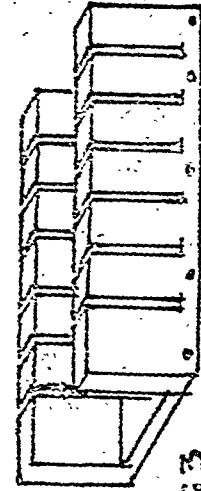
तख्ते पर रखते जाते हैं। शिलाओं को एक-दूसरे के ऊपर ज़रा तिरछा करके रखते हैं, ताकि उनको सुगमता से उठाया जा सके। (देखो चित्र सं० ४ आकृति सं. २)

३. **पट्टियाँ काटना**—चित्र सं० ५ आकृति नं० २ में पट्टी-कटना दिखाया गया है। दो छोटी तख्तियां, (आकृति में b_1 और b द्वारा निर्दिष्ट) ६ इंच लम्बी, ४ इंच ऊँची और ½ इंच मोटी हैं। इनको एक और ६ इंच लम्बी, ४ इंच चौड़ी, ½ इंच मोटी तख्ती B के किनारों पर खड़ा करके पेंचों द्वारा कस दिया जाता है। b और b_1 में दो बराबर के खांचे काटे गये हैं, जो इतने गहरे हैं कि अपने बीच में से गुजरे हुए तार को, तख्ती B से इतना ऊँचा रक्खें कि जितनी मोटी साबुन की पट्टी काटनी हो। तार का एक सिरा N पर गाड़ी हुई कील से बांध दिया गया है और दूसरा सिरा, तार का b_1 तथा तख्तियों के खांचों में से गुज़ारने के बाद, ऊपर गड़े हुए पेंच में बांधा गया है। (आकृति में पट्टी-कटने का बीच का भाग देखो)।

जब साबुन की पट्टी काटनी हो तब साबुन की शिला सीधी खड़ी करके उस पर पट्टी-कटना ठीक ऐसे खींचा जाता है जैसे शिल-कटना साबुन के घन पर खींचा था। बस, पट्टी-कटना प्रतिबार एक-एक पट्टी काटता जाता है। पट्टियों को एक-दूसरे पर रुख बदलकर इकट्ठा किया जाता है, जैसाकि चित्र सं० ४ आकृति सं० ३ में दिखाया गया है। यदि उनकी टिकियां न काटनी हों तो उनपर ही ठप्पा लगाकर बेच दिया जाता है, वरना उनकी टिकियां काट-कर टिकियों पर ठप्पा लगाया जाता है।

साबुन की पट्टियों के प्रचलित साइज़ ये हैं:—इकहरी पट्टी १५ इंच लम्बी, सवा दो से ढाई इंच तक चौड़ी और पौने दो इंच मोटी। एक एक पट्टी का वज़न डेढ़ से पौने दो पौण्ड तक होता है। और एक एक पेटी में ऐसी ६०-६० पट्टियां पैक की हुई होती हैं। डबल बार १५ इंच लम्बा, ढाई इंच चौड़ा और ढाई इंच मोटा होता है। उसका वज़न ३ पौण्ड होता है और एक पेटी में वे ३६ तक पैक किये हुए बिकते हैं।

४. टिकिया बनाना—यदि टिकिया बनानी हो तो साबुन की पट्टियों चित्र सं० ५ आकृति सं ३ में दिखलाये यन्त्र से काट लिया जाता है। इस त्र में एक तख्ते को आधार बनाकर उसके दोनों तरफ एक-एक तख्ती खड़ी दी जाती है और खड़ी तख्तियों में ठीक एक दूसरके सामने खांचे काट दिये ती हैं। खांचों की दूरी टिकियों की मोटाई के समान रखी जाती है। साबुन की या अधिक पट्टियों को आधार के तख्ते पर रखकर, आमने-सामने खांचों में, बारीक फलके की एक छुरी गुज़ार कर, पट्टियां टिकियों में काट जाती हैं। इस यन्त्र के बीच का भाग १५ इंच लम्बा, ढाई इंच चौड़ा और ई इंच ऊँचा है। एक यन्त्र से एक ही साइज़ की टिकियां कट सकती हैं। इस रण यदि कई साइज़ों की टिकियां काटनी हों तो कई साइजों के यन्त्र बनाने पड़ेंगे।

टिकियों पर ठप्पा लगाने से पहले उनको सुखा लिया जाता है।

साबुन काटने की मेज़—साबुन की शिलाओं को पट्टियों और टिकियों अधिक आसानी से काटने के लिए एक खास साबुन काटने की मेज़ बनाई ती है। (देखो चित्र सं० ६) इस मेज़ का नाप ५ फुट लम्बा, ३६ से ३८ तक चौड़ा और ३ फुट ऊँचा है। मेज़ इतनी काफी मज़बूत है कि काटने धक्का बरदाश्त करले और हिले नहीं। मेज़ B और B1 दो भागों में बँटी है, और इनके बीच में कुछ जगह छूटी हुई है ताकि साबुन काटने का फ्रेम वहां टिकाया जा सके। G और G1 दो सीधे खड़े खम्भे हैं, जो काटने के F को सम्भालने में मदद देते हैं। इन दोनों खम्भों के ऊपर के भाग में सम्हालने के लिए खांचे कटे हुए हैं। R और R1 दो लोहे की रेलें हैं नपर काटी जानेवाली साबुन शिला और आगे-पीछे सरकने वाला तख्ता S काया जाता है। इन दोनों रेलों के बीच का अन्तर, काटने के फ्रेम की लम्बाई या काटे जाने वाली साबुन की शिला के साइज़ के समान, अर्थात लगभग २ इंच है। आगे-पीछे सरकने वाला तख्ता S, ३२ इंच लम्बा, ९ इंच ऊंचा र १ इंच मोटा है। उसे खड़ा लगाकर, उसका सम्बन्ध एक नट (ढिबरी) से कर दिया है, जो एक लम्बे पेंच में लगा हुआ है और उसी के साथ आगे छे सरकता है। यह पेंच मेज़ के नीचे दो 'बियरिंगों' में जड़ा हुआ है। मेज़

PLATE NO 6
चित्र सं० ६
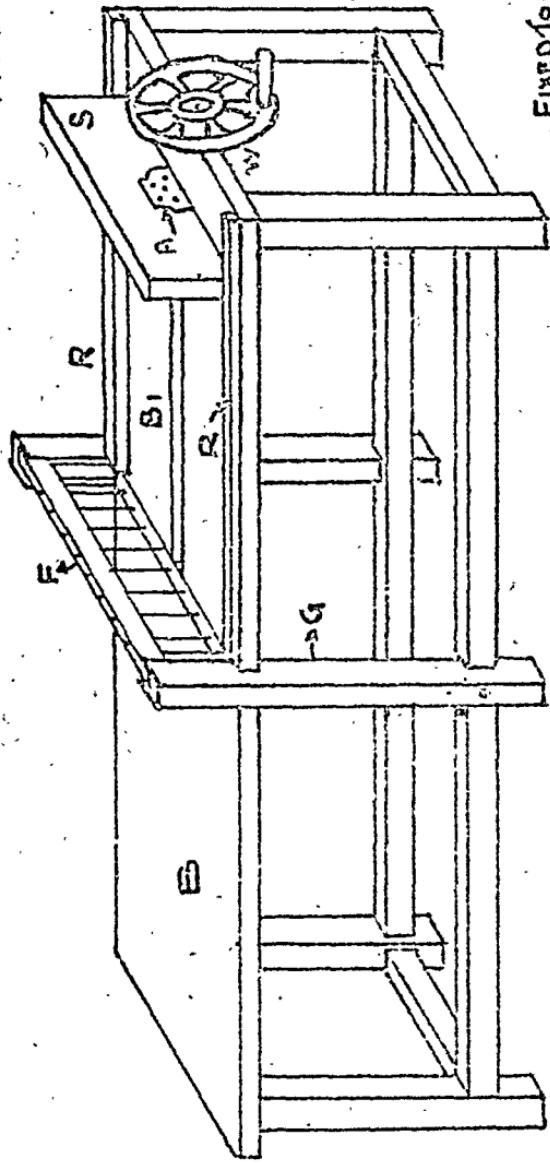
TABLE FOR BAR & CAKE CUTTING.
साबुन काटने की मेज

FIXING SOAP CUTTING FRAME to SIDE POSTS.
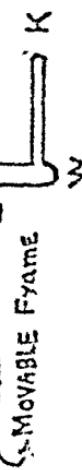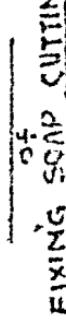
के ऊपर के तख्ते B1 में, बीचों-बीच एक लम्बा खांचा कटा हुआ है, जिसमें यह पेंच घूम सकता है। (देखो चित्र सं० ६) W पेंच के किनारे पर लगा हुआ, घुमाने का पहिया है। जब इस पहिये W को हत्थे K से घुमाया जाता है, तब आगे पीछे सरकने वाला तख्ता S पेंच के साथ साथ आगे पीछे सरकता है।

काटने का फ्रेम अन्दर से ३२ इंच लम्बा या साबुन की शिलाओं की लम्बाई से थोड़ा ज्यादा लम्बा, और लगभग १५ इंच ऊँचा है। यह इतना मज़बूत बना हुआ है कि तारों के कसे जाने पर उनका दबाव सह सके। साबुन की पट्टियाँ या टिकियां जितनी मोटी काटनी हों उतनी ही दूरी पर काटने के फ्रेम में तार लगाये हुए हैं। विविध साइज़ों की पट्टियों और टिकियों के लिए विविध फ्रेमों की ज़रूरत पड़ती है, और उनमें आवश्यकतानुसार तार दूर-दूर या नज़दीक नज़दीक लगे रहते हैं। इन तारों को फ्रेम के नीचे लगे हुए कीलों और ऊपर लगे हुए पेंचों से कस दिया जाता है। फ्रेम को मेज़ पर इस प्रकार जमाया जाता है कि उसका निचला भाग मेज़ की सतह के बराबर या उससे भी कुछ नीचा रहे। किसी भी सूरत में यह मेज़ की सतह से ऊंचा नहीं रहना चाहिए, वरना साबुन की शिलायें सरकते-सरकते, इससे रुक जायँगी।

साबुन की शिला पट्टियों में काटने के लिये, मेज़ के तख्ते B1 पर, R और R1 रेलों तथा आगे पीछे सरकने वाले तख्ते S के बीच में रखकर, पहिले W का हत्था इस तरह घुमाया जाता है कि शिला आगे की तरफ को सरके। बस, शिला फ्रेम की तारों में से गुज़रती हुई पट्टियों में कट जाती है। इसी प्रकार कई शिलायें एक दूसरे पर रखकर इकट्ठी भी काटी जा सकती हैं। तख्ते S को पीछे सरकाकर इसी प्रकार और शिलाओं को रखते और काट लेते हैं।

इसी मेज़ से पट्टियों को टिकियों में काटने का काम लिया जा सकता है। केवल फ्रेम, टिकियों के साइज़ के अनुसार, बदलनी पड़ेगी। यदि टिकियों का साइज़ वही रखना हो जो पट्टियों की चौड़ाई का है, तो फ्रेम बदलने की भी ज़रूरत नहीं। बहुत-सी पट्टियाँ एक दुसरे के ऊपर रखकर एक-साथ भी काटी जा सकती हैं।

सावुन का 'फिनिश' करना—धोने का सावुन बनाने में आखिरी काम, टिकियों को 'फ़िनिश' करना अर्थात् उनको संवार-सिंगार कर सुन्दर बनाना है। यह काम ठप्पा लगाने की मशीन से और विविध आकृतियों व साइज़ों की 'डाइयों' (ठप्पों) से किया जाता है। (चित्र सं. ७ आकृति सं. १) में एक ठप्पा-मशीन दिखायी गयी है। (आकृति सं. २) में जो ठप्पा दिखाया है वह इकहरी धन टिकिया पर छाप लगाने का है, और (आकृति सं. ३) में डबल टिकिया पर छाप लगाने का ठप्पा दिखाया है। ठप्पा लगाने की मशीन का बयान निम्न-लिखित है:—

C, G और G_1 ढले हुए लोहे का एक फ्रेम है। W. F. b.b. एक लिवर है जो उक्त फ्रेम में F पर कसा हुआ है। लिवर के एक किनारे पर एक भारी वज़न W, पेंच से जड़ा हुआ है। लिवर के सामने की तरफ़, K द्वारा निर्दिष्ट स्थान पर एक सलाख P, P_1 जड़ी हुई है। जब लिवर को ऊपर उठाया या नीचे दबाया जाता है तब यह सलाख भी, फ्रेम के G और G^1 भागों में होकर, ऊपर-नीचे सरकती है। A, A_1 और A_2 दूसरी सलाख है, जो लिवर में b पर जुड़ी हुई है। यह सलाख फ्रेम की G और G1 शाखाओं में से गुज़रती है। फ्रेम C, G और G_1 एक मेज़ T पर मज़बूती से जड़ी हुई है। मेज़ के एक किनारे पर एक लम्बा छेद किया हुआ है। इस छेद में से दो पेंच गुज़रते हैं। और इन पेंचों द्वारा, ठप्पे का घर मेज़ के साथ मजबूती से जकड़ा हुआ है। A, A_1 A_2 का A_2 भाग, मेज़ के तख्ते में छेद करके, ठप्पे के निचले भाग से जोड़ा हुआ है।

ठप्पे—सावुन के ठप्पों के तीन भाग होते हैं:—

१. ठप्पे का घर, जोकि मेज़ के तख्ते पर मजबूतीसे जड़ा हुआ है।

२. निचला ठप्पा, जो ठप्पे के घर में खुला पड़ा रहता है।

३. ऊपर का ठप्पा, सलाख P, P के नीचे की तरफ पेंच द्वारा कसा रहता है। ठप्पों के दोनों भाग मेज़ पर इस प्रकार लगे हुए हैं कि जब ठप्पा मशीन का लिवर ऊपर या नीचे किया जाता है तब ये दोनों ठप्पे के घर में
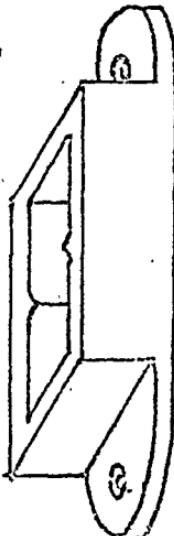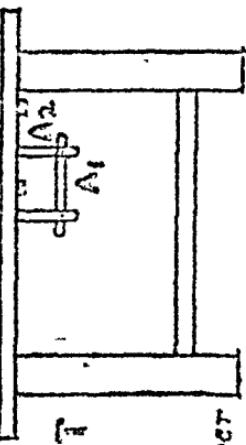
SOAP STAMPING MACHINE.
साबुन पर ठप्पा लगाने की मशीन
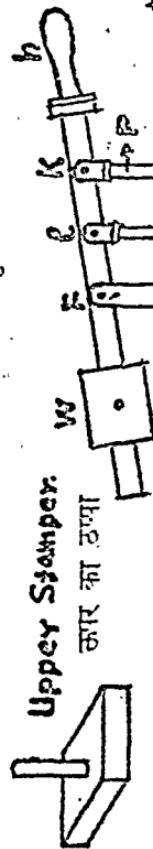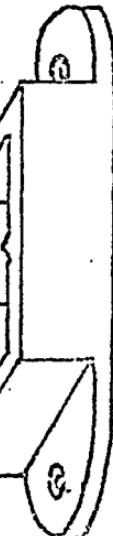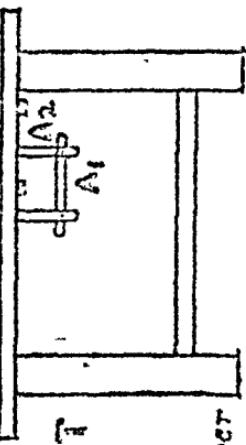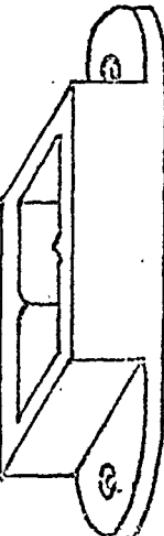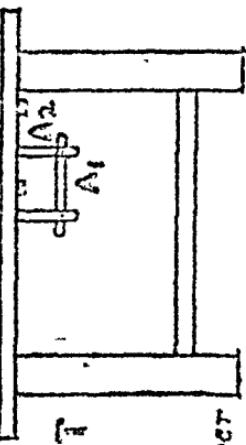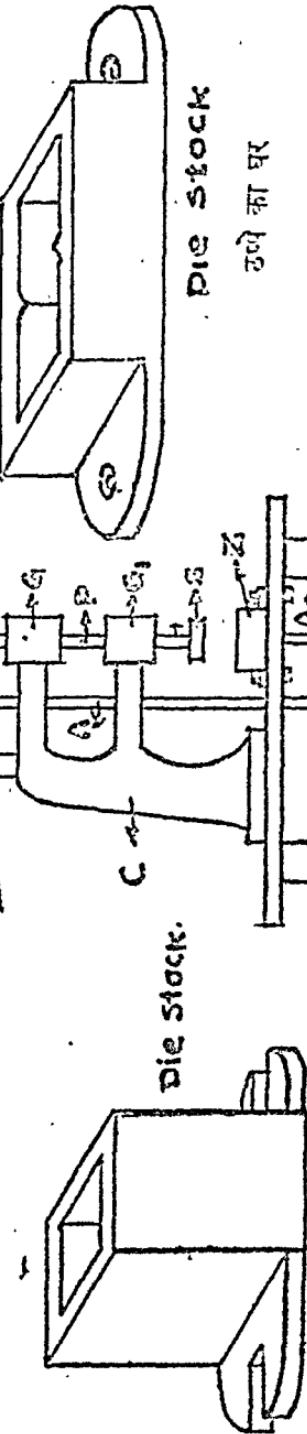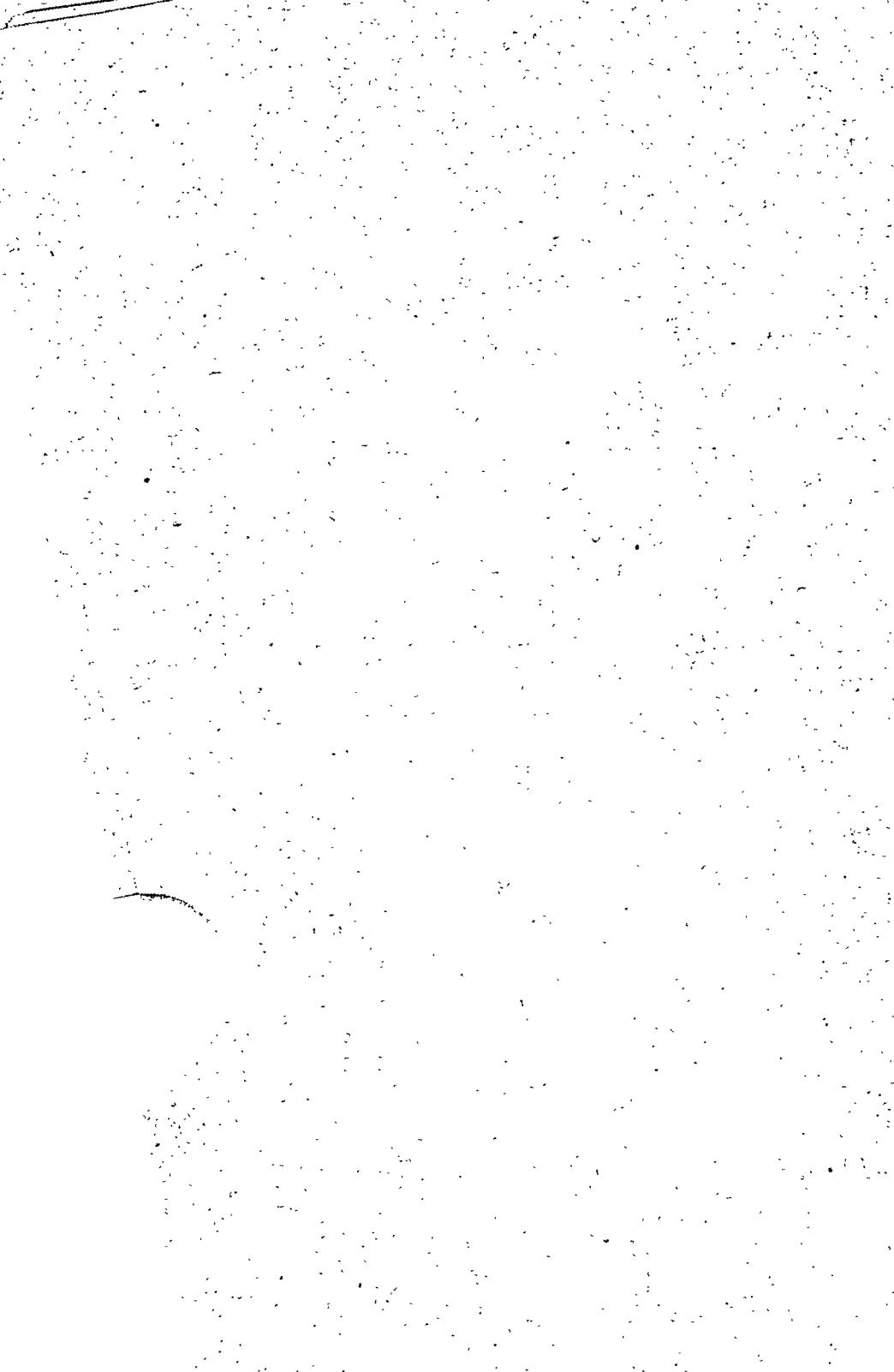
सुगमता से हिल-डुल सकते हैं। ठप्पे *गन-मेटल के बने होते हैं। टिकिया पर 'फिनिश' करते हुए जो अक्षर या चित्र या निशान बनाना हो वह ठप्पों पर खुदा रहता है। चित्र में ठप्पे के घर और ऊपर के ठप्पे की स्थिति क्रमशः Z और S द्वारा निर्दिष्ट है।

जिस टिकिया पर ठप्पा लगाना हो उसे ठप्पे के घर में रखकर, ठप्पा-मशीन का लिवर झटके से और जोर से नीचे को दबाते हैं। बस, टिकिया पर ठप्पे के अक्षर, निशान आदि छप जाते हैं और उसकी शकल भी ठप्पे-जैसी हो जाती है। लिवर को ऊपर छोडने पर टिकिया ठप्पे के घर में से निकल आती है, क्योंकि सलाख A_2 निचले ठप्पे को ऊपर ढकेल देती है। अब इस टिकिया को हटाकर दूसरी रख देते हैं, और इसी प्रकार ठप्पा लगाते चले जाते हैं। चित्र सं० ७ में आकृति सं० २ व ३ द्वारा ठप्पे के विविध भाग दिखाये गये हैं।

प्यालेंमें जमे हुए और लड्डू साबुन—बंगाल में यह रिवाज है कि साबुन मिट्टी के प्यालों में जमाकर, उनकी शकल की टिकिया बाजार में बेची जाती है। और गुजरात व बम्बई-प्रान्तों में साबुन के लड्डू-से बनाकर बेचे जाते हैं। जब साबुन की टिकिया बनाकर उनको 'फिनिश' न करना हो, तब यह इस प्रकार बेचा जा सकता है।

प्यालों में जमाना—साबुन में दाना डालने के बाद, उसे बैठने और नमकीन पानी से अलग होने देते हैं। ठंडा होने से पहले ही, उसके ऊपर का झाग या तो हटा देते हैं या उसे इस प्रकार हिलाकर साबुन में ही मिला देते हैं कि नीचे का नमकीन पानी न हिलने पाये। इस हिलाने का यह फायदा भी है कि यदि साबुन में कुछ नमकीन पानी या खार का घोल बचा रह गया हो तो वह भी नीचे बैठ जाता है। अब साबुन निकाल कर प्यालों में भर दिया जाता है। दानेदार साबुन को द्रव अवस्था में रखने के लिये उसके नीचे बहुत हलकी आँच दिखाई जाती है। प्यालों में भरने के बाद साबुन की सतह धीरे-से किसी कपड़े आदि से दबा दी जाती है, ताकि कोई बुलबुले वगैरह हों तो निकल

* ९ भाग ताँबा और १ भाग कलई मिलाकर बनाई हुई एक धातु जिससे बन्दूकें बनती हैं।

जायँ और टिकिया की सतह साफ़ आ जावे। ठंडा होने पर साबुन प्यालों में से निकालकर बेचने योग्य हो जाता है।

लड्डू साबुन—दाना डालने के बाद साबुन कुछ ठंडा होने देते हैं, और ठोस होने से पहले ही, थोड़ा-थोड़ा निकाल कर, एक छन्नी पर कपड़ा बिछा उसे गूंधते हैं। अगर साबुन में कुछ लाइ बचा हो तो वह या तो छन्नी में से छन जाता है या उसे कपड़ा चूस लेता है। इससे साबुन का नमकीन पानी भी निकल जाता है। इस गुंधे हुए साबुन के इच्छानुसार छोटे-बड़े लड्डू बांध लेते हैं। कभी-कभी, गूंधने के बाद, साबुन को किसी चौकोर साँचे में भी भर देते हैं और जमने के बाद टिकियों पर ठप्पा लगा दिया जाता है।

परिशिष्ट-(क)

कुछ ज्ञातव्य बातें

१. थरमामीटर दो प्रकार के होते हैं—सेण्टीग्रेड और फ़ारनहाइट। इनमें भेद केवल इनकी डिग्रियों का होता है। (एक तीसरा थरमामीटर 'रूमर' भी होता है, परन्तु उसका रिवाज केवल जर्मनी में है) सेण्टीग्रेड और फारनहाइट डिग्रियों को एक-दूसरे में बदलने की विधि नीचे लिखी है।

सेण्टीग्रेड थरमामीटर में पिघलते हुए बरफ का ताप मान ० डिग्री और समुद्र की सतह पर उबलते हुए पानी का ताप-मान १०० डिग्री माना जाता है। समुद्र की सतह पर पानी उबलने का ताप-मान इस कारण लिया जाता है कि विविध ऊँचाइयों पर पानी उबलने का ताप-मान विविध होता है। उदाहरणार्थ ऊँचे पहाड़ों पर पानी जल्दी, यानी नीचे ताप-मान पर ही, उबल जाता है। बरफ़ पिघलने और पानी उबलने के उक्त ताप-मानों के जो निशान थरमामीटर पर लगाये जाते हैं, उनके बीच का फासला १०० हिस्सों में बांट दिया जाता है। बस, वह एक हिस्सा एक डिग्री सेण्टीग्रेड है। जिस थरमामीटर पर इस हिसाब से निशान लगे हुए हों वह सेण्टीग्रेड कहलाता है, और उससे लिया हुआ ताप-मान इतने डिग्री सेण्टीग्रेड लिखा या बोला जाता है।

फारनहाईट थर्मामीटर में बरफ़ पिघलने का ताप-मान ३२ और समुद्र की सतह पर पानी उबलने का ताप-मान २१२ मानकर डिग्रियों के निशान लगाये जाते हैं। और उससे लिया हुआ तापमान इतने डिग्री फारनहाइट लिखा या बोला जाता है। फारनहाइट थर्मामीटर में, बरफ़ पिघलने और पानी उबलने के तापमानों पर, जो निशान लगाये जाते हैं, उनके बीच का फासला १८० हिस्सों में बंटा रहता है। अतः सेण्टीग्रेड और फारनहाइट की डिग्रियों में ५ व ९ का अनुपात हुआ। और सेंटीग्रेड की ० डिग्री क्योंकि फ़ारनहाइट की ३२ डिग्रियों के बराबर होती है, इस कारण सेंटीग्रेड को फ़ारनहाइट में बदलते हुए $\frac{9}{5}$ से गुणा करके ३२ जोड दिया जाता है। इसके विपरीत फारनहाइट डिग्री को सेंण्टीग्रेड में बदलना हो तो ३२ घटाकर $\frac{5}{9}$ से गुणा कर दिया जाता है।

उदाहरणार्थ, ७७ डिग्री फारनहाइट को सेण्टीग्रेड में बदलना हो तो यह हिसाब होगा :—

$$(७७-३२) \times \frac{५}{९} = \frac{४५ \times ५}{९} = २५$$ डिग्री सेण्टीग्रेड।

इससे उल्टा यदि २५ डिग्री सेंटीग्रेड को फारनहाइट में बदलना हो तो यह क्रिया होगी :—

$$\frac{२५ \times ९}{५} + ३२ = ४५ + ३२ = ७७$$ डिग्री फारनहाइट

अंग्रेजी में सेंण्टीग्रेड को उसके आदि-अक्षर C और फारनहाइट को उसके आदि-अक्षर F द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। अतः ऊपर-दिखलायी क्रियाओं का फारमूला (सूत्र) यह हुआ :—

$C = (F - ३२) \times \frac{५}{९}$ और

$F = C \times \frac{९}{५} + ३२$

इन फारमूलों में C की जगह सेंटीग्रेड डिग्री और F की जगह फारनहाइट डिग्री की संख्या लिख देनी चाहिए।

२. टंकियों आदि बरतनों की समाई नापने के फारमूले :—

क. सीधे चौकोर बरतनों के लिए—

समाई=लम्बाई × चौडाई × ऊँचाई। उदाहरणार्थ, ३ फुट लम्बे, २ फुट चौडे और २ फुट ऊँचे बक्स की समाई ३×२×२=१२ घन फुट हुई।

ख. गोल नलदार (नलों की आकृति के) बरतन की समाई जानने के लिए —

समाई = $\frac{२२}{७}$ × व्यास^{२} × गहराई

उदाहरणार्थ, ७ फुट गहरे और २ फुट व्यास के बरतन की समाई $\frac{२२}{७} \times २^{२} \times ७ = \frac{२२}{७} \times ४ \times ७ = ८८$ घनफुट हुई

ग. कडाहियों आदि अर्ध-गोलाकार बरतनों की समाई जानने के लिए—

समाई = $\frac{१}{६} \times \frac{२२}{७}$ × गहराई (गहराई^{२} + ३ त्रिज्या^{२})

इस फारमूला में गहराई, कड़ाही की तली से सतह तक की और त्रिज्या सतह की गोलाई की ली जायगी।

उदाहरणार्थ, ४ फ़ुट व्यास वाले और ३ फ़ुट गहरे कढ़ाये की समाई
$\frac{१}{६} \times \frac{२२}{७} \times ३ \, (३^{२} + ३ \times २^{२}) = \frac{१}{६} \times \frac{२२}{७} \times ३ \, (९ + १२) =$
$\frac{१}{६} \times \frac{२२}{७} \times ६३ = ३३$

नोट—उपरोक्त सब फ़ारमूलों के अनुसार हिसाब करते हुए, सब नाप फ़ुट, इंच या गज़ आदि एक ही पैमाने में लेने चाहिएँ; यह नहीं कि व्यास तो इंचों में नाप लिया और गहराई फ़ुटों में।

एक घन फ़ुट में ६२.३ पौंड या अन्दाज़न ६.२५ गॅलन पानी माता है।

परिशिष्ट (ख)

हाइड्रोमीटर

द्रवों और नमक के घोलों आदि की घनता (पतलापन या गाढ़ापन) और विशिष्ट गुरुत्व (देखो फुटनोट सं० १ पृष्ठ १४) नापने के यन्त्र हाइड्रोमीटर कहलाते हैं। हाइड्रोमीटर में, थर्मामीटर की तरह, नीचे एक गोली होती है और ऊपर एक कांच की नली पर डिग्रियों के निशान लगे रहते हैं। जब हाइड्रोमीटर को किसी द्रव में डुबोया जाता है तब उस (द्रव) का दबाव यन्त्र की गोली पर पड़ता है, और गोली, द्रव के विशिष्टगुरुत्व यानी उसके हलकेपन या भारीपन के अनुसार, नीचे या ऊपर चली जाती है। यन्त्र की नली पर लगे हुए डिग्रियों के निशानों और द्रवों के विशिष्ट गुरुत्व में एक खास सम्बन्ध होता है। साबुन बनाने में बोमी और ट्वेडल नामक दो हाइड्रोमीटर प्रयुक्त होते हैं। पहले की डिग्रियों को बोमी डिग्री और दूसरे की डिग्रियों को ट्वैडल डिग्री बोलते हैं। अंग्रेजी में बोमी डिग्री संक्षेप से Be और ट्वैडल डिग्री T_w लिखी जाती है।

इस परिशिष्ट में दी हुई सूचियों में यह बतलाया गया है कि यदि किसी द्रव या घोल की बोमी या ट्वैडल डिग्री मालूम हो तो उसका विशिष्ट गुरुत्व क्या होगा और उसमें घुला हुआ लवण कितने प्रतिशत होगा। बोमी और ट्वैडल में से जो हाइड्रोमीटर इस्तेमाल किया जाय उसी की डिग्री के अनुसार विशिष्ट गुरुत्व देखना चाहिए; यह नहीं कि डिग्री तो देखी बोमी की और विशिष्ट गुरुत्व देखने लगे ट्वैडल डिग्री के सामने लिखा हुआ।

कॉस्टिक सोडा (हस्टं) घोल का विशिष्ट गुरुत्व, बोमी आर ट्वैडल डिग्री

बोमी	ट्वैडल	विशिष्ट गुरुत्व (स्पेसिफिक ग्रैविटी)	बोमी	ट्वैडल	विशिष्ट गुरुत्व (स्पेसिफिक ग्रैविटी)
०	०	१.००	२१	३४.२	१.१७१
१	१.४	१.००७	२२	३६.०	१.१८०
२	२.८	१.०१४	२३	३८.०	१.१९०
३	४.४	१.०२२	२४	४०.०	१.२००
४	५.८	१.०२९	२५	४२.०	१.२१०
५	७.२	१.०३६	२६	४४.०	१.२२०
६	९.०	१.०४५	२७	४६.२	१.२३१
७	१०.४	१.०५२	२८	४८.२	१.२४१
८	१२	१.०६०	२९	५०.४	१.२५२
९	१३.४	१.०६७	३०	५२.६	१.२६३
१०	१५	१.०७५	३१	५४.८	१.२७४
११	१६.६	१.०८३	३२	५७.०	१.२८५
१२	१८.२	१.०९१	३३	५९.४	१.२९७
१३	२०.२	१.१००	३४	६१.६	१.३०८
१४	२१.६	१.१०८	३५	६४.०	१.३२०
१५	२३.२	१.११६	३६	६६.४	१.३३२
१६	२५.०	१.१२५	३७	६९.०	१.३४५
१७	२६.८	१.१३४	३८	७१.४	१.३५७
१८	२८.४	१.१४२	३९	७४.०	१.३७०
१९	३०.४	१.१५२	४०	७६.६	१.३८३
२०	३२.४	१.१६२			

परिशिष्ट [ग]

बाज़ारी कॉस्टिक सोडा (लैम्बोर्न) के एक गैलन लाइ में वास्तविक शुद्ध कॉस्टिक का अनुपात पौण्डों में

डिग्री ट्वैडल	डिग्री बोमी	विशिष्ट गुरुत्व (स्पेसिफिक ग्रेविटी)	७७° प्रतिशत ९५.०% कॉस्टिक सोडा	७४° प्रतिशत ९५.०% कॉस्टिक सोडा	७०° प्रतिशत ९०.०% कॉस्टिक सोडा
०	०	१.००			
१	०.७	१.००५	०.०४८	०.०४६	०.०४३
२	१.४	१.०१०	०.०९७	०.०९२	०.०८७
३	२.१	१.०१५	०.१४६	०.१३१	०.१२९
४	२.७	१.०२०	०.१९४	०.१८५	०.१८०
५	३.४	१.०२५	०.२४३	०.२३१	०.२१९
६	४.१	१.०३०	०.२९१	०.२७८	०.२६२
७	४.७	१.०३५	०.३३५	०.३२०	०.३०३
८	५.४	१.०४०	०.३८९	०.३७१	०.३५०
९	६.०	१.०४५	०.४३८	०.४१७	०.३९३
१०	६.७	१.०५०	०.४८६	०.४६१	०.४३८
११	७.४	१.०५५	०.५३६	०.५१०	०.४८३
१२	८.०	१.०६०	०.५८६	०.५५८	०.५२८
१३	८.७	१.०६५	०.६३६	०.६०७	०.५७३
१४	९.४	१.०७०	०.६८०	०.६५३	०.६१७
१५	१०.०	१.०७५	०.७४२	०.७०७	०.६६८
१६	१०.६	१.०८०	०.७८६	०.७४९	०.७०९
१७	११.२	१.०८५	०.८३६	०.७९८	०.७५५
१८	११.९	१.०९०	०.८८६	०.८४५	०.८००
१९	१२.४	१.०९५	०.९३७	०.८९४	०.८४६
२०	१३.०	२.०००	०.९८६	०.९४१	०.८९०

डिग्री ट्वैटल	डिग्री बोमी	विशिष्ट गुरुत्व (स्पेसिफिक ग्रेविटी)	७७० प्रतिशत ९५.०% कॉस्टिक सोडा	७४० प्रतिशत ९५.०% कॉस्टिक सोडा	७०० प्रतिशत ९०.०% कॉस्टिक सोडा
२१	१३.६	१.१०५	१.०३७	०.९८९	०.९३८
२२	१४.२	१.११०	१.०८७	१.०३७	०.९८१
२३	१४.९	१.११५	१.०३७	१.१२३	१.०२६
२४	१५.४	१.१२०	१.१८७	१.१७५	१.०७१
२५	१६.०	१.१२५	१.२३८	१.१८१	१.११७
२६	१६.५	१.१३०	१.२९६	१.२३७	१.१७०
२७	१७.१	१.१३५	१.३५४	१.२९२	१.२२२
२८	१७.७	१.१४०	१.४१३	१.३५०	१.२७७
२९	१८.३	१.१४५	१.४७०	१.४१३	१.३३७
३०	१८.८	१.१५०	१.५२९	१.४६०	१.३८१
३१	१९.३	१.१५५	१.६००	१.५२८	१.४४५
३२	१९.८	१.१६०	१.६४६	१.५४१	१.४५६
३३	२०.३	१.१६५	१.७०५	१.६२७	१.५३९
३४	२०.९	१.१७०	१.७६४	१.६८४	१.५९३
३५	२१.४	१.१७५	१.८२२	१.७३९	१.६४५
३६	२२.०	१.१८०	१.९०४	१.८१७	१.७१९
३७	२२.५	१.१८५	१.९४२	१.८५३	१.७३३
३८	२३.०	१.१९०	१.९९२	१.८८७	१.८०४
३९	२३.५	१.१९५	२.०५५	१.९६२	१.८५६
४०	२४.०	१.२००	२.१२२	२.०२६	१.९१६
४१	२४.५	१.२०५	२.१३५	२.०८५	१.९७३
४२	२५.०	१.२१०	२.२५२	२.१४७	२.०३३
४३	२५.५	१.२१५	२.३२३	२.२२१	२.०९७
४४	२६.०	१.२२०	२.३९२	२.२८०	२.१६१
४५	२६.४	१.२२५	२.४४४	२.३३८	२.२०६
४६	२६.९	१.२३०	२.५६२	२.४१७	२.२८५
४७	२७.४	१.२३५	२.५९३	२.४७५	२.३४१

डिग्री ट्वैडल	डिग्री बोमी	विशिष्ट गुरुत्व (स्पेसिफिक ग्रेविटी)	७७° प्रतिशत ९५.१% कॉस्टिक सोडा	७४° प्रतिशत ९५.६% कॉस्टिक सोडा	७०° प्रतिशत ९०.०% कॉस्टिक सोडा
४८	२७.९	१.२४०	२.६६९	२.५४८	२.४१०
४९	२८.४	१.२४५	२.७३९	२.६१५	२.४७४
५०	२८.८	१.२५०	२.८०९	२.६८१	२.५३६
५१	२९.३	१.२५५	२.८८१	२.७५०	२.६०२
५२	२९.७	१.२६०	२.९५२	२.८१८	२.६६६
५३	३०.२	१.२६५	३.०२०	२.८८६	२.७३०
५४	३०.६	१.२७०	३.०९५	२.९९५	२.७९५
५५	३१.१	१.२७५	३.१७१	३.०२७	२.८६३
५६	३१.५	१.२८०	३.२३७	३.०९०	२.९३२
५७	३२.०	१.२८५	३.३०८	३.१५८	२.९८८
५८	३२.४	१.२९०	३.३८१	३.२२७	३.०५३
५९	३२.८	१.२९५	३.४५२	३.२६४	३.११७
६०	३३.२	१.३००	५.५२४	३.३९४	३.१८२
६१	३३.७	१.३०५	३.६०३	३.४३९	३.२५३
६२	३४.२	१.३१०	३.६८२	३.५१४	३.३२४
६३	३४.६	१.३१५	३.७६०	३.५९३	३.३९५
६४	३५.०	१.३२०	३.८४९	३.६७४	३.४७५
६५	३५.४	१.३२५	३.९१९	३.७४२	३.५३९
६६	३५.८	१.३३०	३.९९७	३.८१६	३.६१०
६७	३६.२	१.३३५	४.०७२	३.८९१	३.६८७
६८	३६.६	१.३४०	४.१५६	३.९६७	३.७५४
६९	३७.०	१.३४५	४.२३२	४.०४२	३.८२४
७०	३७.४	१.३५०	४.३१२	४.११६	३.८९४

परिशिष्ट घ.

तेलों में पूर्ण साबुन-क्रिया [सैपोनिफिकेशन] करने के लिए शुद्ध कॉस्टिक सोडा और कॉस्टिक पोटॅश की प्रति-शतकता

संख्या	तेल या फैट (चिकनाई) का नाम	कास्टिक पोटाश की प्रति-शतकता	कास्टिक सोडा की प्रति-शतकता
	क. अशुष्क तेल		
१	नारियल तेल	२५ से २६ तक	१८ से १९ तक
२	खाकन तेल	२४.५ से २५ तक	१७.५ से १८ तक
३	भैरोटी तेल	२० से २१ तक	१४.२ से १५ तक
४	मलाबार चरबी	१९	१३.६
५	कोकम बटर	१८	१२.७५
६	महुआ तेल	१९.५ से २० तक	१४ से १४.२ तक
७	नीम का तेल	१९ से १९.५ तक	१३.६ से १४ तक
८	करंजिया तेल	१८.५ से १९ तक	१३.२ से १३.६ तक
९	मूङ्गफली तेल	१८.५ से १९ तक	१३.२ से १३.६ तक
१०	एरण्डी तेल	१७.५ से १८.२ तक	१२.५ से १२.६ तक
	ख. अर्ध-शुष्क तेल		
१	बिनौलों का तेल	१९ से १९.५ तक	१३.६ से १४ तक
२	तिलों का तेल	१९	१३.६
३	सरसों का तेल	१७ से १८ तक	१२. से १२.७५ तक
	ग. शुष्क तेल		
१	अलसी का तेल	१९ से १९.५ तक	१३.६ से १४
२	कुसुम्भ का तेल	१९	१३.६
३	निग्गर का तेल	१९	१३.६
४	खसखस का तेल	१९ से १९.७ तक	१३.६ से १४ तक
	घ. बरोजा	१७ से २० तक	१२ से १४ तक

१०० भाग तेल से लगभग १५० भाग दानेदार या ठहरा हुआ साबुन बनता है, और यह साबुनसाज़ की प्रति-शतकता कहलाती है।

अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ, मगनवाड़ी, वर्धा

प्राप्य पुस्तकोंकी मूल्य सूचि

शर्तें

निम्न लिखित पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। जो सज्जन किताबें मंगाना चाहें उन्हें चाहिये कि वे उनकी कीमत तथा डाक खर्चकी रकम टिकटोंके रूपमें या मनिआर्डर द्वारा पेशगी भेज दें। पुस्तकें अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी और गुजराथी इन भाषाओंमें हैं। इसलिये आर्डर देते समय अंग्रेजीके लिये (अ) हिन्दीके लिये (हि) मराठीके लिये (म), और गुजराथी के लिये (गु) ऐसा लिख देना चाहिये। **पता, डाकखाना, जिला, स्टेशन आदि साफ लिखें।** रजिस्टर पोस्टसे चाहिये हो तो चार आने अधिक भेजें।

कोई भी बुकसेलर एक साथ कम से कम रु० २५/- के हमारे प्रकाशन मंगावेंगे तो उन्हें १५% कमिशन दिया जावेगा। पेकिंग, रेल्वे खर्च तथा दीगर खर्च जिम्मे खरीददार। पुस्तकें मंगाते समय रु० १०/- पेशगी भेजने चाहिये और शेष रकम व्ही. पी. द्वारा वसूल की जावेगी।

जिनके पीछे तारेका चिन्ह (*) है वे हमारे प्रकाशन नहीं हैं। इसलिये उनपर कोई कमीशन नहीं दिया जावेगा।

रास्तेकी किसीभी किस्मकी नुकसानीके हम जिम्मेवार न होंगे।

१. सामान्य

ग्राम आन्दोलनकी आवश्यकता—

ले. जे. सी. कुमारप्पा [गांधीजीकी प्रस्तावना सहित]

गांधीजी कहते हैं— ग्राम आन्दोलनकी आवश्यकता और व्यावहारिकताके संबंधमें जितने कुछ आक्षेप उठाये गये हैं उन सबका श्री. जे. सी. कुमारप्पाने इस पुस्तकमें जवाब दिया है। ग्रामोंसे प्रेम रखनेवाले हरएक व्यक्तिको इसे अपने पास रखना चाहिये। शंकितोंकी शंकाएं इसे पढ़ने पर निर्मूल हुए बिना नहीं रह सकतीं। मुझे तो ऐसा लगता है कि नैराश्यका आन्दोलन शुरू होनेके पूर्व ठीक समयपर ग्राम आन्दोलन की आवश्यकता प्रकाशित हुई है। यह किताब इस विषयके प्रश्नोंका जवाब देनेकी कोशिश करती है।

		कीमत	डाक खर्च
पांचवा संस्करण (छप रहा है)	(अ)		
	,, (हिं)		
	* (गु)	२-०-०	०-३-०
गांधीवादी अर्थ व्यवस्था और अन्य प्रबंध	(अ)	१-८-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
स्थायी समाज व्यवस्था	(अ)	२-०-०	०-४-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			

गांधीजी लिखते हैं—"येशू खिस्तका उपदेश और उनका आचरण" इस पुस्तकके समान डॉ० कुमारप्पाने यह किताबभी जेलमें ही लिखी है। यह पहली पुस्तक जितनी समझनेमें आसान नहीं है। उसका पूरा मतलब समझमें आनेके लिये उसे कमसे कम दो या तीन बार ध्यान पूर्वक पढ़ जाना चाहिये। जब मैंने उसका हस्त लिखित पढ़ना शुरू किया तब मुझे कुतूहल था कि आखिर इस पुस्तकका प्रतिपाद्य विषय क्या होगा। पर पहले ही प्रकरणसे मुझे समाधान मिला और मैं उसे आखिर तक पढ़गया। ऐसा करनेमें मुझें कोई थकावट नहीं मालुम पडी, प्रत्युत कुछ फायदा ही हुआ"

		कीमत	डाक खर्च
कर्म विज्ञान और अन्य प्रबंध	(अ)	०-१२-०	०-२-०
ले. जे. सी कुमारप्पा			
विज्ञान और तरक्की	(अ)	०-१२-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
शांति और समृद्धि	(अ)	०-८-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
खूनसे सना पैसा	(अ)	०-१२-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
योरप-गांधीवादी चष्मेसे	(अ)	०-८-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
***आम जनताका स्वराज्य** (छप रहा है)			
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
मुद्रास्फीति, उसके कारण और उपाय	(अ)	०-८-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा			
ग्रामोंके उत्थानकी एक योजना	(अ)	१-८-०	०-२-०
ले. जे. सी. कुमारप्पा (छप रही है) (हिं)			

		कीमत	डाक खर्च
स्त्रियां और ग्रामोद्योग ले. जे. सी. कुमारप्पा	(अ)	०-४-०	०-१-०
ग्राम उद्योग पत्रिका अ. भा. ग्राम उ. संघका मासिक मुखपत्र			
वार्षिक चंदा (मय डाक खर्च)	(अ) या (	२-०-०	
पिछले प्राप्य अंक १९३९-४३-४५	प्रति	०-४-०	
(अंक अंग्रेजी तथा हिंदीमें मिल सकेंगे)			
अ. भा. ग्रा. उ. संघ वार्षिक विवरण			
१९३८।३९।४०।४१ प्रति पुस्तक	(अ)	०-३-०	०-१-०
१९३५।३६।३७।३८।३९।४०।४१	(हिं)	०-३-०	०-१-०
४२-४३(अ)	(हिं)	०-५-०	०-२-०
४४।४५।४६	(अ)	०-५-०	०-२-०

२. खुराक

चावल	(अ)	१-८-०	०-२-०
	(हिं)	०-१२-०	०-२-०
भारतीय खाद्य पदार्थोंकी उपयुक्तता	(अ)	०-१०-०	०-२-०
और उनसे प्राप्त जीवन तत्व	(हिं)	०-३-०	०-१-०
हमें क्या खाना चाहिये? ले. झ. पु. पटेल	(अ) (हिं)	२-०-०	०-४-०
अनाज पीसना	(अ)	०-८-०	०-१-०
खुराक-बच्चोंकी पाठ्यपुस्तक ले. झवेरभाई पटेल	(हिं)	१-०-०	०-२-०

३. उद्योग

तेलघानी— ले. झवेरभाई पटेल	(अ) (हिं)	३-०-०	०-४-०
तेलकी मिल बनाम घानी (तेलघानीमेंका एक प्रकरण)	(अ) (हिं)	०-२-०	०-१-०
ताड़ गुड़— ले. गजानन नाईक	(अ) (हिं)	१-०-०	०-२-०
मधुमक्खी पालन-	(हिं) (अ)	२-०-०	०-२-०
साबुन साजी- ले. के. बी. जोशी	(हिं) (अ)	१-८-०	०-२-०
हाथ कागज़ बनाना- ले. के. बी. जोशी	(अ)	४-०-०	०-४-०
	(हिं)	१-८-०	०-३-०
धोती जामा " " (छप रही है)	(हिं)		

(एक धोतीमेंसे दो धोतीजामे किस प्रकार बनाये जा सकते हैं इसकी जानकारी इसमें दी गई है। ऐसा करनेसे आधी कीमतमें पाजामा पहनने मिल जाता है)

४. पैमाइश

* मध्यप्रांत सरकारकी औद्योगिक अन्वेषण कमेटीकी रिपोर्ट

[श्री. जे. सी. कुमारप्पाकी सदारतमें]

गांधीजी लिखते हैं— दूसरे परिच्छेदमें जो सर्व साधारण चर्चा है उससे इसकी मौलिकता स्पष्ट होती है और वह यह भी बताती है कि यह रिपोर्ट शीघ्र ही अमलमें आनी चाहिये, फाईलमें केवल पडी न रहने देनी चाहिए। कमेटीने सभी उद्योगोंके निस्बत व्यवहार्य सूचनाएँ की हैं। जिज्ञासुओंको रिपोर्ट मंगाकर अवश्य पढनी चाहिये।

		कीमत	डाक खर्च
खण्ड १ भाग १ (पृष्ठ ५०) ६०६ देहातोंकी पैमाइशके बाद सरकारको की हुई सर्व सामान्य सूचनाएँ	(छप रहा है)		
खण्ड १ भाग २ (पृष्ठ १३२) चुने हुए दो जिलोंकी पैमाइश और २४ ग्राम उद्योगोंपर टिप्पणियां	(अ)	१-०-०	०-४-०
खण्ड २ भाग १ (पृष्ठ ४०) जंगल, खनिज और यांत्रिक-शक्ति उत्पादन के साधनोंके निस्बत सूचनाएं	(अ)	०-८-०	०-२-०
खण्ड २भाग २ खनिज उत्पत्ति, जंगलकी उत्पत्ति और यांत्रिक-शक्ति उत्पादन साधनोंके चुने हुए मार्गोंका तथा बाजार, ढुलाईके साधन और कर निश्चिति आदिके संबंध में चर्चा	(अ)	०-१२-०	०-४-०

* वायव्य सरहद प्रांतके लिये एक आर्थिक योजना (पृष्ठ ३८)

(पूर्ति सहित)

ले. जे. सी. कुमारप्पा (अ) ०-१२-० ०-३-०

सर मिर्झा इस्माईल लिखते हैं — प्रांतकी औद्योगिक उन्नतिके लिये जिन सवालोंपर चर्चा करना जरूरी था उनपर आपने बहुत ही साफ तौरसे चर्चा की है इसके लिये मैं आपका अभिनन्दन करता हूँ। आपने यह सवाल व्यावहारिक और वास्तविक ढंग से कैसे हल हो सकता है यह बताया है।

* मातर तालुकाकी पैमाइश— ले. जे. सी. कुमारप्पा

(अ) २-०-० ०-६-०